अमर लोग

॥ श्री ॥

गुरू दीपक गुरू देवता, गुरू धन धोर सुमेर ।
गुरू सूरज है ज्ञान के, गुरू बिन घोर अन्धेर ॥

आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी महाराज साहिब

की

सेवामें सादर समर्पित

पूनमचन्द हरिचन्द्र बडेर, केवलचन्द्र इन्द्रचन्द्र हीरावत
हेमचन्द पदमचन्द

सम्पादक- पारसमल डागा

आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा के जयपुर चातुर्मास

के पुनीत अवसर पर

अमर-लाभ

आशीर्वचन

आ ार्य श्री हस्ती लजी . ा.

लेखक

श्री हीरामुनिजी व श्री चौथमलजी म. सा.

सहयोगी

तपस्वी श्री श्रीचन्दजी म. सा

सम्पादक

पारसमल डागा

प्र ाशक : प्रवचन प्रका न समिति, यपुर

पुस्तक अमर-लाभ

•

आशीर्वचन आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा

•

लेखक श्री हीरामुनिजी
श्री चौथमलजी म सा

•

सहयोग श्री केवलचन्दजी इन्दरचन्दजी हीरावत
श्री पूनमचन्दजी हरीचन्द्रजी बडेर
श्री हेमचन्दजी पदमचन्दजी

•

सम्पादक पारसमल डागा

•

प्रकाशक प्रवचन प्रकाशन समिति, जयपुर

•

मूल्य एक रुपया पचास पैसे

•

प्रथम सस्करण १००१

•

मुद्रक गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जयपुर

श्रमरण सस्कृति के दो उज्ज्वल तारे ·

?- ।

दो आदर्श सन्त ·

स्व. श्री अमरचन्दजी म. सा.

व

स्व. श्रीलाभचन्दजी म. ।.

(जीवन की झाकी)

आशीर्वचन

भारत सदा से सतो की तपो भूमि रहा है। तप इस राष्ट्र की अपार निधि है। यही कारण है कि आदिकाल से भारतीय सस्कृति सन्तो की सस्कृति रही है। सन्त का जीवन ज्ञान, विवेक और वैराग्य का प्रशस्त पथ है। वह वासनाओ तथा कामनाओ का निरोधक है यही कारण है कि सन्त भारतीय जनजीवन मे पूरा समा गया है। तप उसकी आत्मा है। वह सयम और तप से अपने आपको पवित्र करता है और साधना के महापथ पर दृढ सकल्प से आगे बढता है। भारतीय जनमानस उसके इसी आदर्श की आराधना एव उपासना करता है। उसकी आराधना पावन आदर्शों की प्रतीक है तथा श्रद्धा का केन्द्र बिन्दु है।

बीसवी शताब्दी मे ऐसे ही दो तप पूत सन्तो के अवतरण से वीर भूमि राजस्थान देदीप्यमान हो उठी थी जिनके साधनामय जीवन से तप का स्रोत वेगवान् हुआ था तथा जिनके जीवन से मानव मन की सुप्त चेतना अङ्गडाई भर जागृत हुई थी। वे दो महान् साधक थे, तप पूत श्री अमरचन्द जी म तथा लाभचन्द जी म ।

स्व मुनि श्री अमरचन्दजी एक मूक प्रेरणा के स्रोत सन्त थे। दिनचर्या की कठोरता, चारित्रिक विशेषता तथा मूक साधना के सुसयोग से उनका समग्र जीवन साधन और साध्य का सफल परीक्षण था। वे स्थानकवासी परम्परा के आदर्श साधक थे। वे पिंड से नही गुण गण से जन मन के वदनीय और प्रेम पात्र थे।

स्व मुनि श्री लाभचन्दजी मेरे चिर स्नेही, गुरु भाई और सच्चे आत्मार्थी साधक थे। उनका जीवनवृत्त शब्दायित कर जिस प्रयास को प्रतिष्ठित किया है, वह गुणानुराग समाज मे सतत् वृद्धिगत हो, यही शुभकामना है।

—आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा

दिनाङ्क ३१-१०-७३
लाल भवन,
चौडा रास्ता, जयपुर (राज०)

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली-4

PRESIDENT'S SECRETARIAT,
Rashtrapati Bhavan,
New Delhi 4

सत्यमेव जयते

पत्रावली स 8-एम/73

सितम्बर 13, 1973

प्रिय महोदय,

राष्ट्रपति जी के नाम भेजा दिनाक 6 सितम्बर, 1973 का आपका पत्र प्राप्त हुआ, धन्यवाद।

राष्ट्रपति जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप प्रवचन-प्रकाशन समिति की ओर से स्व० अमरचन्द जी तथा स्व० लाभचन्द जी का जीवन चरित्र प्रकाशित करने जा रहे हैं। राष्ट्रपति जी आपके इस कार्य की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाओ के सहित।

भवदीय
खेमराज गुप्त
राष्ट्रपति के उपसचिव

हार्दिक-अभिनन्दन

तप आध्यात्मिक साधना का अमर सगीत है। जैन साधना का एक रूप बाहर मे रहता है-दूसरा अन्तर मे। तप भी उभयमुखी है। अनशन बाहर मे रहता हुआ जब समभाव की अन्तरधारा से जुडता है, वह आत्मरूप हो जाता है।"

स्व श्री अमरचन्द जी म सा एव स्व श्री लाभचन्द जी महाराज सा स्थानकवासी जैन परम्परा के ऐसे ही तपोनिष्ठ सजग, सचेत और मूक सन्त थे। उनके जीवनवृत्त प्रकाशन के पुनीत अवसर पर हार्दिक अभिनन्दन!

पूनमचन्द हरिचन्द्र बडेर
ज्वैलर्स
कुदीगरो के भैरूजी का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

भारत के उपराष्ट्रपति के सचिव,
नई दिल्ली
Secretary
To the Vice President of India,
New Delhi

दिनांक 11 सितम्बर, 1973

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनांक 6 सितम्बर, 1973 का उपराष्ट्रपति जी के नाम प्राप्त हुआ, धन्यवाद।

उपराष्ट्रपति जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप प्रवचन प्रकाशन समिति की ओर से स्व० अमरचन्द्र जी तथा स्व० लाभचन्द जी का जीवन-चरित्र प्रकाशित करने जा रहे है। उपराष्ट्रपति जी आपके इस प्रयास की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनायें भेजते हैं।

आपका
वी० फडके
उपराष्ट्रपति के उपसचिव

कोटि-कोटि प्रणाम !

"जैन धर्म मे तप का वैसा ही महत्वपूर्ण स्थान है, जैसा कि मानव-
शरीर मे हृदय का । जैन साधना का आमूल-चूल अ ग
तप के अमृत स्रोत से आप्लावित है ।"

स्व श्री अमरचन्द जी म सा तथा स्व श्री लाभचन्द जी
म सा जैन साधना के मूर्धन्य सन्त थे ।
उनके जीवन वृत के पावन प्रकाशन
के अवसर पर
कोटि-कोटि नमस्कार !

केवलचन्द्र इन्द्रचन्द्र हीरावत
ज्वैलर्स
परतानियों का रास्ता, जयपुर

GOVERNOR
OF MYSORE

सत्यमेव जयते

राज भवन,
बेंगलोर
18 सितम्बर, 1973
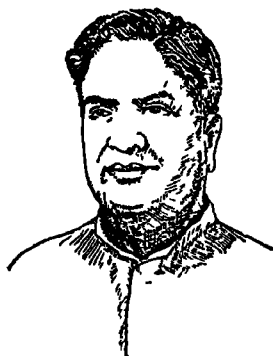
प्रिय पारसमल जी,

आपका दिनाक 6 सितम्बर का पत्र प्राप्त हुआ। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि प्रवचन प्रकाशन समिति के तत्वावधान मे जैन सस्कृति के महान् सन्त श्री अमरचन्द्रजी और श्री लाभचन्द्रजी के जीवनवृत्त प्रकाशित किये जा रहे हैं। मुझे आशा है कि इस प्रकाशन से लोग लाभान्वित होगे। प्रकाशन की सफलता के लिये मैं अपनी शुभकामनायें भेजता हू।

आपका
मोहनलाल सुखाडिया

त्-सत् नमस्कार !

"तप जीवन की सर्वांगीण समुन्नति का सरस सोपान है। जीवन का प्रत्येक आचरण जब तप से अनुप्राणित होता है–तब निश्चय ही हमारा जीवन तपस्वी होगा।"

स्व श्री अमर मुनि एव स्व श्री लाभचन्द्र जी का समग्र जीवन उस ही तप का विराट् और व्यापक स्वरूप था।

उनके जीवन-वृत्त के प्रकाशन की पावन घडियो मे शत्-शत् नमस्कार !

हेमचन्द पदमचन्द
ज्वैलर्स
पीतलियों का चौक, जौहरी बाजार, जयपुर।

सत्यमेव जयते

मुख्य मत्री
मध्य प्रदेश शासन,
भोपाल
दिनाक 13-11-73

श्री पारसमल डागा,

प्रबन्ध सम्पादक,

प्रिय महोदय,

मुझे यह जानकर हर्ष है कि प्रवचन प्रकाशन समिति, जयपुर, श्रद्धेय सन्त स्व० श्री अमरचन्द्रजी महाराज तथा स्व श्री लाभचन्द्रजी महाराज के प्रेरक जीवन-चरित्र प्रकाशित करने जा रही है।

सतो के आप्त-वचन जन-जन के कल्याण के लिये होते हैं। उनका सकलन एव प्रकाशन जनता की बहुत बडी सेवा है। मुझे विश्वास है कि यह प्रकाशन बहुत-सी प्रचलित भ्रातियो को दूर कर, पाठको को मानव मात्र की सेवा करने की प्रेरणा प्रदान करेगा।

इस सद्प्रयत्न के लिये मेरी बधाई स्वीकार कीजिये।

प्रकाशचन्द सेठी

शुभ-कामना

प्रिय श्री डागा जी, ता० १४-१२-७३

सप्रेम वन्दे !

कृपा पत्र मिला-धन्यवाद ! बडी प्रसन्नता की बात है कि आप "अमर-लाभ" का प्रकाशन कर रहे हैं। स्व श्री अमरचन्द जी म सा आज राजस्थान की राजधानी के जन-मानस मे समाये हुये हैं। उनकी स्मृति मे सस्थापित श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी आज समग्र राजस्थान मे अपनी चिकित्सा-सेवा के लिये विख्यात है। यह सब उस अदृश्य आत्मा की प्रेरणा का प्रतिफल है।

सन्त समाज का नैतिक चिकित्सक होता है-विशेषकर जैन सन्त का जीवन-क्रम तो सर्वथा कठोर और अपरिहार्य होता है। स्व मुनि लाभचन्द जी म सा का समूचा जीवन समस्या और समाधान का ज्वलन्त उदाहरण रहा है। आशा है दोनो ही महापुरुषो के जीवन-वृत मानव मात्र के लिये आत्म-कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने में समर्थ होंगे। आपका यह प्रयास स्तुत्य है। मैं पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करता हू।

सधन्यवाद !

नथमल गोलेछा

महाचार्य

एस एस जैन सुबोध महाविद्यालय, जयपुर

द :

यो तो ससार के समस्त भौतिक आकर्षणो, सहज ही प्रत्येक को लुभा देने वाले प्रलोभनो, ऐहिक इच्छाओ, आकाक्षाओ एव मोहन्ममता के निविड बन्धनो को एक ही झटके मे तोडकर कण्टकाकीर्ण साधना पथ पर अग्रसर होने वाले प्रत्येक श्रमण का जीवन साधको और मुमुक्षुओ के लिए प्रेरणा प्रदायी होता है तथापि कुछ विशिष्ट कोटि के ऐसे साधक भी होते हैं जिनका तपोपूत सादा, सरल सहिष्णु और साहस भरा जीवन शताब्दियो तक साधक समाज के लिए प्रकाश स्तम्भ की तरह साधना की सच्ची दिशा का निर्देश करता रहता है।

समस्त जैन समाज विशेषत. जयपुर जैन समाज का प्राय प्रत्येक श्रद्धालु व्यक्ति इस तथ्य से भली भाति परीचित है कि स्व० श्री अमर-चन्द जी म० सा० का जीवन इसी प्रकार का विशिष्ट और प्रेरणा प्रदायी था। समाज सेवी सुश्रावक पारसमल जी डागा ने मुझे कहा कि श्री अमरचन्द जी म० सा० जैसे साधक सतो का जीवन चरित्र लिखा जाय तो उससे हजारो लाखो लोगो को अनेक अच्छी-अच्छी प्रेरणाएँ मिल सकती है। मैं स्वर्गीय अमरचन्द जी महाराज साहब के उत्कृष्ट साधक जीवन पर पहले से ही मुग्ध था।

डागा जी की प्रेरणा पाकर आदरणीय प० मुनि श्री चौथमल जी म० सा० ने स्व० मुनि श्री लाभचन्द जी म० सा० का और मैने स्व श्री अमरचन्द जी म० सा० का जीवन चरित्र जनहित की भावना से प्रेरित हो लिखा और समाज के सम्मुख रख दिया।

यद्यपि उनके समग्र जीवन की आद्योपान्त चर्चा इसमे नही की गई है तथापि यथासम्भव किसी महत्वपूर्ण घटना को अछूता भी नही छोडा गया है।

हमे आशा है कि पाठक इन दो महान् सन्तो के चरित्र (अमर लाभ) से प्रेरणा ग्रहण कर हमारे इस प्रयास को सफल करेंगे।

लाल भवन, जयपुर

—हीरा मुनी

स्थानकवासी परम्परा का भव्य–भवन जो आज अपने गौरवमय इतिहास के लिये देदीप्यमान है–उसके आधार-भूत तत्वो पर जब हमारी दृष्टि जाती है तो सहसा हमारा हृदय दो महान् विभूतियो के दिव्य–दर्शन से पुलकित हो उठता है। लोकाशाह की क्रान्तिकारी विचार धारा को तीव्रगति से प्रवाहित करने वाले आचार्य श्री धर्मदास जी, श्री लवजी ऋषि एव श्री धर्मसिंह जी म० के नाम सदा अमर रहेगे। ये तीनो ही महान् विभूतियाँ उच्चकोटि के क्रिया उद्धारक तथा आत्मार्थी साधक थे जिन्होने अठारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे धर्म जागृति की मन्द पडी ज्योति को पुन प्रज्वलित किया।

श्री धन्नाजी महाराज पूज्य श्री धर्मदास जी महाराज के पट्ट शिष्यो मे थे। आप के स्वर्गवास के पश्चात् पूज्य भूधर जी म सा ने आचार्य पद का भार वहन किया। सवत् १८०४ मे आप स्वर्गवासी हुये। आपके चार बडे शिष्य हुये जिनमे सव श्री पूज्य रघुनाथजी म सा श्री जैतसीजी म, सा ३ पूज्य श्री जयमल्लजी म सा एव ४ पूज्य श्री कुशलचन्द्रजी म सा। स्व श्री अमरचन्दजी तथा श्रीलाभचन्द्रजी म सा पूज्य कुशलजी म सा तथा श्री रतनचन्दजी म सा की परम्परा और समुदाय मे थे।

आप परम तपस्वी, प्रात स्मरणीय श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म सा के गुरु भाई थे। एक लम्बी अवधि से यह आकांक्षा प्रबल हो रही थी कि दोनो सन्तो का जीवन वृत प्रकाशित किया जावे। सवत् २०३० के चातुर्मास मे तो यह विचार प्राय बनसा गया था। बडी प्रसन्नता की बात है कि प्रकाशन समिति इस गुरुतर भार को वहन कर यह जीवन वृत्त पाठकों के कोमल करों में प्रस्तुत कर रही है।

स्व श्री अमरचन्दजी म सा जैसे तपोनिष्ठ चिन्तक और सेवा भावी आत्मार्थी सन्त के सम्बन्ध मे तो क्या कहा जाय? उन्हीं की अदृश्य प्रेरणा से श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी चिकित्सा के क्षेत्र म जयपुर के नागरिको की अनि वच सेवा कर रही है।

मेरा आग्रह स्वीकार कर श्री हीरा मुनि जी म सा व श्री चौथमलजी म सा ने इन दोनो सन्तो के जीवन चरित्र तयार किये। इस कार्य मे प्रेरणा का सारा श्रेय श्री श्रीचन्दजी महाराज को ही है जिनकी प्रेरणा ने मुझे मार्ग-दर्शन दिया है इस

को भुलाया नही जा सकता है। मैं उक्त सब ही सन्तो के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। जिन्हो ने इस कार्य मे प्रेरणा दी है।

"अमर–लाभ" के प्रकाशन मे मुझे जिन बन्धुओ का सहयोग, दिशा–दर्शन मिला है–उन सबके प्रति आभार प्रकट करता हूँ विशेष रूप से श्री केवलचन्दजी, श्री इन्द्रचन्द्रजी, श्री हेमचन्द्रजी, बम श्री पद्मचन्द्रजी कोठारी, श्री पूनमचन्द्र श्री हरिश्चन्द्र जी बडेर, श्री सागरमल जी डागा, श्री सरदारमल जी चोपडा, श्री चुन्नीलाल जी ललवानी जो हमारी सफलता के साधन और साध्य हैं। मैं इस अवसर पर भाई श्री गजसिंह जी राठौर और श्री प्रेमचन्दजी गगवाल को भी नही भूल सकता जिन्होने पाण्डुलिपि तैयार करने मे अपना अपूर्व योग दिया है उनका मै आभारी हू। अन्त मे मै दोनो महापुरुषो जिनका जीवन चारित्र हमारे लिये प्रकाशवान हो उनको मै कोटि २ अभिनन्दन करता हूँ।

इस सारे प्रकाशन एव सम्पादन मे कोई भूल हो गई हो तो पाठक हमे क्षमा करें।

—पारसमल डागा
सम्पादक व प्रकाशक
"अमर–लाभ"

जयपुर

स्थानकवासी परम्परा का भव्य–भवन जो आज अपने गौरवमय इतिहास के लिये देदीप्यमान है–उसके आधार-भूत तत्वो पर जब हमारी दृष्टि जाती है तो सहसा हमारा हृदय दो महान् विभूतियो के दिव्य–दर्शन से पुलकित हो उठता है। लोकाशाह की क्रान्तिकारी विचार धारा को तीव्रगति से प्रवाहित करने वाले आचार्य श्री धमदास जी, श्री लवजी ऋषि एव श्री धर्मसिंह जी म० के नाम सदा अमर रहेगे। ये तीनो ही महान् विभूतियाँ उच्चकोटि के क्रिया उद्धारक तथा आत्मार्थी साधक थे जिन्होने अठारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे धर्म जागृति की मन्द पडी ज्योति को पुन प्रज्वलित किया।

श्री धन्नाजी महाराज पूज्य श्री धमदास जी महाराज के पट्ट शिष्यो मे थे। आप के स्वर्गवास के पश्चात् पूज्य भूधर जी म सा ने आचार्य पद का भार वहन किया। सवत् १८०४ मे आप स्वर्गवासी हुये। आपके चार बडे शिष्य हुये जिनमे सव श्री पूज्य रघुनाथजी म सा श्री जैतसीजी म, सा ३ पूज्य श्री जयमल्लजी म सा एव ४ पूज्य श्री कुशलचन्द्रजी म सा। स्व श्री अमरचन्दजी तथा श्रीलाभचन्द्रजी म सा पूज्य कुशलजी म सा तथा श्री रतनचन्दजी म सा की परम्परा और समुदाय मे थे।

आप परम तपस्वी, प्रात स्मरणीय श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म सा के गुरु भाई थे। एक लम्बी अवधि से यह आकाक्षा प्रवल हो रही थी कि दोनो सन्तो का जीवन वृत प्रकाशित किया जावे। सवत् २०३० के चातुर्मास सें तो यह विचार प्राय बनसा गया था। वडी प्रसन्नता की वात है कि प्रकाशन समिति इस गुरुत्तर भार को वहन कर यह जीवन वृत्त पाठको के कोमल करो में प्रस्तुत कर रही है।

स्व श्री अमरचन्दजी म सा जैसे तपोनिष्ठ चिन्तक और सेवा भावी आत्मार्थी सन्त के सम्बन्ध मे तो क्या कहा जाय ? उन्ही की अदृश्य प्रेरणा से श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी चिकित्सा के क्षेत्र मे जयपुर के लाखो लोगो की प्रति वर्ष सेवा कर रही है।

मेरा आग्रह स्वीकार कर श्री हीरा मुनि जी म सा व श्री चौथमलजी म सा ने इन दोनो सन्तो के जीवन चरित्र तैयार किये। इस काय मे प्रेरणा देने का श्रेय श्री श्रीचन्दजी महाराज को ही है जिनकी प्रेरणा ने मुझे मार्ग-दर्शन दिया है इस

को भुलाया नही जा सकता है। मैं उक्त सब ही सन्तों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करना अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। जिन्हो ने इस कार्य मे प्रेरणा दी है।

"अमर-लाभ" के प्रकाशन मे मुझे जिन वन्धुओ का सहयोग, दिशा-दर्शन मिला है-उन सबके प्रति आभार प्रकट करता हूँ विशेष रूप से श्री केवलचन्दजी, श्री इन्द्रचन्द्रजी, श्री हेमचन्द्रजी, बम श्री पद्मचन्द्रजी कोठारी, श्री पूनमचन्द्र श्री हरिश्चन्द्र जी बडेर, श्री सागरमल जी डागा, श्री सरदारमल जी चोपडा, श्री चुन्नीलाल जी ललवानी जो हमारी सफलता के साधन और साध्य हैं। मैं इस अवसर पर भाई श्री गर्जसिह जी राठौर और श्री प्रेमचन्दजी गगवाल को भी नही भूल सकता जिन्होंने पाण्डुलिपि तैयार करने मे अपना अपूर्व योग दिया है उनका मै आभारी हू। अन्त मे मै दोनो महापुरुषो जिनका जीवन चारित्र हमारे लिये प्रकाशवान हो उनको मै कोटि २ अभिनन्दन करता हूँ।

इस सारे प्रकाशन एव सम्पादन मे कोई भूल हो गई हो तो पाठक हमे क्षमा करें।

—पारसमल डागा
सम्पादक व प्रकाशक
"अमर-लाभ"

जयपुर

अनुक्रम

१	श्रमण-सस्कृति	२ से ६
२	क्रान्तिकारी कदम	७ से ८
३	अमर साधक	९ से १०
४	सयोग और वियोग	११ से १५
५	भागवती दीक्षा	१६ से १९
६	अध्ययन, चिन्तन, मनन आचरण	२० से २१
७	सेवाभावी साधक	२२ से २४
८	अदृष्टपूर्व सरलता सहिष्णुता और साहस	२५ से २६
९	साधना की कसौटी	२७ से ३०
१०	महान् कल्याणकारी योजना	३१ से ३२
११	महासत का महाप्रयाण	३३ से ३४
१२	स्व अमर मुनि और जयपुर	३५ से ३६

श्री अमरचन्दजी महाराज ाहब
की
जीवन घटना ों
का
तिथिक्रम

जन्म—भोपालगढ, माघ कृष्णा ७ सवत् १९५५

दीक्षा—जोधपुर, माघ शुक्ला १० सवत् १९६७

स्वर्गवास—जयपुर, आषाढ कृष्णा ३ वि स २०१७

अनुक्रम

१	श्रमण-संस्कृति	२ से ६
२	क्रान्तिकारी कदम	७ से ८
३	अमर साधक	९ से १०
४	संयोग और वियोग	११ से १५
५	भागवती दीक्षा	१६ से १९
६	अध्ययन, चिन्तन, मनन आचरण	२० से २१
७	सेवाभावी साधक	२२ से २४
८	अदृष्टपूर्व सरलता सहिष्णुता और साहस	२५ से २६
९	साधना की कसौटी	२७ से ३०
१०	महान् कल्याणकारी योजना	३१ से ३२
११	महासत का महाप्रयाण	३३ से ३४
१२	स्व अमर मुनि और जयपुर	३५ से ३६

श्री अमरचन्दजी हाराज ाहब
की
जीवन घटना ों
का
तिथिक्रम

जन्म—भोपालगढ, माघ कृष्णा ७ सवत् १९५५

दीक्षा—जोधपुर, माघ शुक्ला १०   , १९६७

स्वर्गवास—जयपुर, आषाढ कृष्णा ३ वि. स २०१७

भी स्वभावत विनाशशील है, यह एक प्रत्यक्ष सत्य है। ऐसी स्थिति मे शारीरिक शक्ति पर एकान्तत (निर्भर) भरोसा नही किया जा सकता। वस्तुत आत्मशक्ति-आध्यात्मिक शक्ति ही सच्ची शक्ति है, जो अक्षय और अनन्त है।

शारीरिक शक्ति पुद्गलो के सहयोग-सयोग से समुत्पन्न शक्ति है जो उनके वियोग के साथ परिक्षीण होती रहती है और उनके पूर्ण विकास के साथ पूर्णत नष्ट हो जाती है। इस सन्दर्भ मे हमे पद्म पुराण की वह सूक्ति स्मरण हो आती है जिसमे कहा है —

"सार्वभौमोऽपि भवति खट्वामात्र परिग्रह ।"

अर्थात् चाहे कोई सुविशाल भू-भाग का स्वामी-चक्रवर्ती सम्राट हो क्यो न हो, अन्त मे एक खाट के माप तुल्य भूमि ही उसके उपयोग मे आती है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इतने विशाल वैभव को प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी वस्तुत वह चक्रवर्ती सम्राट ऐसा कुछ भी प्राप्त नही कर पाया जो उसका चिरसगी हो।

इसके विपरीत आध्यात्मिक शक्ति द्वारा जो भी प्राप्त किया जाता है वह ध्रुव-चिरस्थायी एव अविनाशशील होता है। आत्मा और आत्म-शक्ति अविनाशशील होने के कारण आत्मा निज आत्मशक्ति से जो कुछ अर्जित करता है वह भी अविनाशशील होता है। आध्यात्मिक शक्ति आत्मा का स्वय का वह स्वाभाविक गुण है। जिसका अक्षय अनन्त भण्डार स्वय आत्मा मे प्रच्छन्न रूप से विद्यमान है। आवश्यकता है उस अनन्त शक्ति के स्रोत के उद्गम स्थल के मुख को खोलने की।

अनन्त अक्षय आत्म-शक्ति के उस स्रोत के अवरुद्ध मुख को खोलना ही श्रमण-सस्कृति का चरम और परम लक्ष्य है। श्रमण-सस्कृति आध्यात्मिक शक्ति के उस अजस्र स्रोत को प्रवाहित करने की सविधि शिक्षा देती है। आध्यात्मिक शक्ति के उस स्रोत के एक बार प्रवाहित होते ही हृदय की समस्त सशय ग्र थिया छिन्न भिन्न हो जाती हैं। कोटि कोटि सूर्यों के प्रकाश से भी कही अधिक प्रकाशमान अलौकिक आलोक अन्तर मे

उद्भूत हो जाता है। यही कारण है कि श्रमण-सस्कृति आध्यात्मिक शक्ति को ही वास्तविक सच्ची शक्ति मानती है। श्रमण-सस्कृति की यह दृढ मान्यता है कि आत्मा का उत्कर्ष आध्यात्मिक शक्ति को जागृत करने पर ही हो सकता है, एक सच्चा आत्म-वीर सहस्रो शूरवीरो पर सहज ही मे विजय प्राप्त कर सकता है। आत्म-शक्ति के बल पर ही साधक साधना के कण्टकाकीर्ण दुर्गम पथ पर दृढता और साहस के साथ अग्रसर होता है। आत्म शक्ति केवल स्वय आत्मा द्वारा ही उपार्जित की जा सकती है, इस तथ्य का उल्लेख आगम मे इस प्रकार किया गया है —

अप्पाकत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पामित्तममित्त च, दुपट्ठिय सुपट्ठियो ॥३७॥उ॥अ २०॥

अर्थात् आत्मा ही सब सुख-दु खो का सृजनहार एव सहारक है। सन्मार्ग मे शक्ति लगाने वाला आत्मा स्वय का मित्र और दुष्मार्ग मे शक्ति लगाने वाला आत्मा अपना स्वय का शत्रु है।

इन सब तथ्यो से यह सिद्ध होता है कि श्रमण-सस्कृति आत्म शक्ति अर्थात् आत्मा की पवित्रता आदि स्वगुणो के विकास का दर्शन है तथा आत्मगुणो का चरम विकास श्रमण-सस्कृति का मूल दर्शन है। इसी सत्य की अमर साधना मे भगवान् ऋखभदेव से भगवान् महावीर तक २४ तीर्थङ्करो द्वारा प्रदर्शित श्रमण-सस्कृति के चरम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति के पथ पर असख्य साधको ने अग्रसर होने का प्रयास किया और उन्होने अपने-अपने प्रयास के अनुरूप सफलताएँ भी अवाप्त की।

तीर्थङ्कर काल श्रमण-सस्कृति का स्वर्णिम युग माना जाता है। उस काल मे श्रमण-सस्कृति अपने विकास की चरमोत्कृष्ट स्थिति पर अवस्थित रही। प्रत्येक तीर्थङ्कर के काल मे सहस्रो ही नही, लाखो की सख्या मे श्रमण-श्रमणियो एव साधक-साधिकाओ के समूह समय-समय पर स्व-पर कल्याण की अपूर्व लगन लिये अपने पावन लक्ष्य की ओर अग्रसर हुए।

'जिस प्रकार भगवान् महावीर के पूर्ववर्ती तेवीस तीर्थङ्करो के निर्वाणोत्तर काल मे श्रमण-सस्कृति को अनेक उतार चढावो के दौरे से

गुजरना पडा, उसी प्रकार भगवान् महावीर के निर्वाणानन्तर काल मे भी श्रमण-सस्कृति मे अनेक उतार-चढाव, उत्कर्प-अपकर्प आये। कतिपय ऐसे अवसर भी उपस्थित हुए जब सघन घटा की ओट मे छपे हुए सूर्य के समान श्रमण-सस्कृति भी धूमिल वातावरण से आच्छादित हो जाने के कारण विलुप्त प्राय सी प्रतीत होने लगी। परन्तु समय-समय पर त्याग, तपोनिष्ठ, परोपकारैकव्रती आचार्यो एव साहसी सतो तथा साधको ने उन सकट की घडियो मे अनेक प्रकार के कष्ट सहकर भी उस धूमिल वातावरण को समाप्त कर श्रमण-सस्कृति की रक्षा की। श्रमण-सस्कृति को सुरक्षित रखने वाले उन साहसी आचार्यो सतो एव साधको का समाज सदा ऋणि रहेगा।

अतीत की घटनाओ के विहगमावलोकन से सहज ही यह विदित हो जाता है कि जैन समाज को आभ्यतर सघर्षो से जितनी बडी हानि उठानी पडी उतनी वडी हानि (कुल मिलाकर) बाह्य शक्तियो द्वारा जितने भी आक्रमण सघर्ष किये गये, उनसे भी नही हुई। जब तक जैन समाज एकता के सूत्र मे बधा रह कर भगवान् महावीर द्वारा प्रदर्शित पथ पर चलता रहा, तव तक वह उत्तरोत्तर अभ्युदय की ओर अग्रसर होता रहा। पर जब-जब वह एक्यता और प्रभु महावीर द्वारा प्रदर्शित पथ से विचलित हुआ तब-तब उसका अपकर्ष ही हुआ।

कुछ अ शो मे जैनेतर सस्कृतियो के प्रचार प्रसार के साथ-साथ श्रमण-सस्कृति के प्रति उनके सघर्षपूर्ण व्यवहार एव अधिकाशत जैन सघ के आध्यन्तरिक सघर्प के फलस्वरूप श्रमण सघ की प्रगति मे अनेक बार अवरोध उत्पन्न हुए। शनै शनै धार्मिक अन्धविश्वासो, थोथे कर्मकाण्डो एव जडता की जडें जमने के कारण पाखण्ड की काली चादर समाज के समुज्वल स्वरूप को आवृत करने लगी। फलत आध्यात्मिक तेजोनिधान श्रमण-सस्कृति अपने ही अनुयायियो द्वारा विभाजित हो निस्तेज होने लगी। तेज के साथ-साथ उसका प्रभाव विलुप्त सा होने लगा।

क्रान्तिकारी-कदम

ढाई हजार वर्ष का इतिहास इस वात का प्रबल साक्षी है कि जब जब देश, जाति, समाज एव धर्म पर पाखण्ड का प्रभाव आच्छादित हुआ तब-तब देश एव राष्ट्र मे ऐसी महान आत्माओ का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होने अपने जीवन का उत्सर्ग कर अज्ञान् अन्धकार मे विलोडित-मानव को अमर शान्ति का सन्देश दिया। यही नही यदि विश्व के इतिहास के पृष्ठो को पलट कर देखा जाय तो सत्य का स्वत उद्घोष हो जावेगा।

भारतीय इतिहास मे सोलहवी सदी का काल भी ऐसा ही धार्मिक क्रान्ति का समय रहा है। जागरण तथा वैचारिक उद्बोधन इस काल की महान् उपलब्धि है। इस काल मे समाज, जाति, देश और राष्ट्र ने धार्मिक दृष्टि से अनेको करवटें ली हैं। महाकवि कबीर तथा लोकाशाह इस वैचारिक क्रान्ति के प्रवर्तक थे। इस वैचारिक क्रान्ति और निराडम्बरी निर्गुणधारा ने धार्मिक रुचि वाले लोगो को उद्बोधित किया।

परम पूज्य, प्रात स्मरणीय, धर्मप्राण लोकाशाह इसी युग की महान् विभूति थे। साधना, भक्ति तथा उपासना के क्षेत्र मे ऐतिहासिक सुधार के जनक और उसमे आत्मनिष्ठ दृष्टि को परिष्कृत एव परिमार्जित करने वाले वे महान् तेजस्वी विचारक थे।

धर्म समीक्षको एव विचारको की मान्यता है कि आज के युग मे जहा हजारो प्रकार के धार्मिक विचार एव उपासना के विविध प्रकार प्रचलित है, वहा स्थानकवासी धर्म की विचार एव धार्मिक उपासना पद्धति परिष्कृत, परिमार्जित और आडम्बर विहीन है। वह भगवान् महावीर के आदर्शो का प्रतिनिधित्व करती है। इस ही श्वेताम्बर जैन स्थानकवासी परम्परा की स्थापना के रूप मे जो रूढिवाद का उन्मूलन, मान्यताओ मे सशोधन एव उन्नयन किया गया वह लोकाशाह की विचारशीलता, जागरूकता एव धर्म क्रान्ति का प्रतिफल है। श्रमण-सस्कृति मे साधना, भक्ति एव उपासना की विधि निर्दोष तथा भाव पूजा का प्रतीक स्थानकवासी

परम्परा लोकाशाह के विचारो से पुष्पित और पल्लवित है। इसकी साधनाओ मे आज भी महावीर की साधना की तेजस्विता झलकती है जीव और जगत के प्रति सम्यक् दृष्टि, आत्मवादी चिन्तन और मनन, आडम्बर-विहीन साधना लोक-कल्याण की विशुद्ध भावना स्थानकवासी परम्परा की धर्म साधना की मूल विशेषताए है। इन विशेषताओ का पुन प्रस्फुरण सोलहवी सदी के धर्मप्राण लोकाशाह की ऊजस्वल चिन्तन धरा मे हुआ। जीव और जगत की समस्याओ का समीचीन समाधान स्थानकवासी परम्परा का एक अर्थ मे जीवट है।

लोकाशाह अपने समय के क्रान्तिकारी धर्म सुधारक थे। वे सत्य के निर्भीक अन्वेषक अच्छे वक्ता यथार्थता के उद्घोषक एव दक्ष दार्शनिक थे। उन्होने जैन धर्म के मूल आदर्शों, साधना पद्धतियो एव जीवन दर्शन का सयुक्तिक सही सही विश्लेषण किया। लोकाशाह की विचारधारा को मूर्त रूप देने वाले श्री जीवराजजी म सा श्री लवजी म सा आदि क्रिया उद्धारक महापुरुषो मे श्री धर्मदास जी म सा भी एक प्रमुख महापुरुष थे। वे अपने युग के तेजस्वी धर्म प्रचारक एव जन जागृति के अग्रदूत थे। राजस्थान की वीर भूमि मे श्री धर्मदास जी म सा के उत्तराधिकारी पूज्य धन्नाजी, पूज्य भूधरजी आदि हुए। पूज्य भूधरजी के प्रमुख शिष्यो मे पूज्य रघुनाथजी, पूज्य जयमल्लजी और पूज्य कुशलाजी जैसे महान् सत हुए, जिन्होने तप, सयम की साधना के साथ-साथ धर्म का प्रचार एव प्रसार किया। अठारहवी एव उन्नीसवी सदी का समय स्थानकवासी परम्परा का स्वर्णिम युग माना जाता है। उस काल मे अनेको प्रभावशाली आचार्य, घोर तपस्वी और प्रतिभा सम्पन्न सतो का जन्म हुआ। उन्होने अपने आत्म-तेज, साहस और जीवट से धर्म की गरिमा मे आशातीत अभिवृद्धि की। आचार्य कुशलोजी म सा की पट्ट परम्परा मे वर्तमान मे आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म सा अपने पूर्व आचार्यो के ज्ञान, दर्शन एव चारित्रिक गुणो को अक्षुण्ण रखते हुए स्थानकवासी परम्परा के गौरव और गरिमा की कीर्तिपताका को चारो ओर फहरा रहे है। स्व श्री अमरचन्द्र जी तथा लाभचन्द्र जी म सा आपके ही गुरु भाई थे।

अमर-साधक

स्थानकवासी जैन समाज के मूर्धन्य संतो मे स्व. श्री अमरचन्द जी म. सा. का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। स्व. अमरचन्द जी म. सा. ने जैन संस्कृति के अहिंसा और अपरिग्रह इन दो महान् सिद्धान्तो को अपने जीवन मे अक्षरश: उतारा था। यदि आज भी उक्त सिद्धान्तो की अनुपालना की जावे तो विश्व के समस्त झगड़ो, संघर्षों एवं तनावपूर्ण स्थितियो का अन्त हो सकता है। अहिंसा और अपरिग्रह विश्व बन्धुत्व की कारगर कुंजी है। इसके द्वारा ऊँच नीच, मानव-मानव मे रंग, जाति, देशजन्य भेद एवं अनेक जटिल समस्याओं का समीचीन समाधान ढूँढा जा सकता है। इनके संबल से शोषण विहीन, समतामूलक समाज की संरचना की जा सकती है। स्व. अमरचन्द जी म. सा. ने उक्त आदर्शों को अपने जीवन मे प्रतिष्ठित किया और स्थान-स्थान पर जाकर इनका निष्ठा के साथ प्रचार भी किया। उनकी दिनचर्या का अधिकांश समय आत्म-चिन्तन मे व्यतीत होता था। वे वस्तुत: बड़े ही क्रियानिष्ठ संत थे। जैन आगमो मे ऋषि, मुनि तथा साधक की जो दिनचर्या निर्दिष्ट की गई है उसे देख सहसा कोई साधारण व्यक्ति उस पथ पर आगे आने का साहस नही करता, क्योंकि श्रमण-संस्कृति का साधना पथ बड़ा ही कठोर और कंटकाकीर्ण है। श्रमणाचार्य मे भाषा ज्ञान का उतना अधिक महत्व नही, जितना इन्द्रीय संयम और इच्छा दमन का। स्व. श्री अमरचन्द जी म. सा. उस ही शृंखला की एक सबल कड़ी थे। जिसमे कृतित्व ही भाषा, साधना ही, लिपि, कर्मों की निर्जरा ही वर्णव्यंजना तथा आत्मानन्द की अनुभूति ही ध्वनि रूपा थी।

स्व. अमर मुनि ने परम्परा के उस पवित्र सूत्र को सदा हृदयंगम रखते हुए अपने आचरण मे ढाला, जिसमे अहिंसा, अपरिग्रह की सूक्ष्माति-सूक्ष्म व्याख्या और विवेचना की गई है। वह विशद विवेचन सापेक्षता पर अवलम्बित है जिसके पीछे किसी प्रकार का दुराग्रह और अनुचित हठ नही।

वह तो अध्यात्म की ठोस धरा पर खडा है। वह मानव के चरित्र को महत्व देता है, उसके पुरुषार्थ का आलकन करता है। आत्मिक पावनता पर आख गडाता है। वह मोह और ममता के परिहार को आत्मविकास के लिये अनिवार्य रूप से आवश्यक बताता है स्व अमर मुनि इस ही आदर्श से अनुप्राणित थे।

आपका जन्म विक्रम सवत् १९५५ की माघ कृष्णा ७ को भोपाल गढ (बडलु), राजस्थान मे हुआ। भोपालगढ सदा से धार्मिक एव सामाजिक गतिविधियो मे सक्रिय रूप से अग्रगण्य रहा है। मरुभूमि पर अध्यात्म-रस की अविरल धारा प्रवाहित करने वाले स्रोतो मे भोपालगढ का भी विशिष्ट स्थान है। धनराजजी एक कुशल व्यवसायी होने के साथ दानी, धर्मात्मा तथा कर्मनिष्ठ श्रद्धालु श्रावक थे। भारत के सुदूर दक्षिण मे आपका व्यापार चलता था। हैदराबाद उनके व्यवसाय का केन्द्र था।

राजस्थान की मरुभूमि मे जन्म लेकर, सुदूर दक्षिण मे धन और मान अर्जित करना इस ओर इगित करता (इशारा) करता है कि राजस्थान न केवल रणबाँकुरे राजपूतो के रणकौशल, साहस और शौर्य के लिए ही विख्यात है वरन् यहा के व्यवसायी भी अपने क्षेत्र के जानेमाने चोटी के बुद्धिजीवी व्यक्ति हैं। आज वे समग्र भारत के कौने-कौने मे विद्यमान हैं। व्यवसायिक क्षेत्र मे उनकी समता करने वाला अन्य नहीं। श्री धनराज जी भी ऐसे ही सपूतो मे से एक थे। सुदूर दक्षिण मे जाकर यश सम्पत्ति और वैभव का उपार्जन उनकी कार्यकुशलता, अदम्य उत्साह तथा दूरदर्शिता का द्योतक है। धन सग्रह के साथ-साथ वे उसको सद्कार्यों मे व्यय भी करते थे। १० वर्ष की आयु तक बालक अमर का समय हैदराबाद मे ही बीता एव वही उनकी प्रारम्भिक शिक्षा चलती रही।

संयोग और वियोग

सुख के उजले सुन्दर वासर,
सकट की काली राते।
कट जाते हैं दिन दिन वर्षों
आशा की करते बातें ।।

—उपाध्याय कवि श्री अमर मुनि

सुख के दिन क्षण पल के समान आनन-फानन मे ही व्यतीत हो जाते हैं पर दु ख का एक-एक दिन पहाड तुल्य प्रतीत होता है। मानव आशाओ की अमर बेली का वितान करना चाहता है। पर दुर्दैव उसे उखाड फेंकता है। दुर्दैव को कुछ और ही स्वीकार था। प्रारब्ध की वलवत्ता को प्रकट करने वाली कबीर की वे पक्तिया स्मरण हो आती हैं जिनमे उन्होने कर्म-गति की अपरिहार्यता एव विचित्रता का दिग्दर्शन कराया है —

"कर्म गति टाले नही टलै" जीवन के उदय काल मे जिसने कभी यह अनुभव नही किया "किसे कहते हैं पीडा" वही सयोग और वियोग के झूले मे झूलने लगा। दस वर्ष की आयु रेखा भी पार नही की थी कि पिताश्री का साया उसके सिर पर से सदा के लिए उठ गया। इस अनभ्र वज्रपात की स्वजन स्वप्न मे कल्पना भी नही करते थे, किन्तु कर्म की गति ऐसी ही विचित्र होती है। निदान वैधव्य के दाह से विदग्ध निस्सहाय सुन्दर वाई को अपने अल्पवयस्क पुत्र के साथ भोपालगढ लौटना पडा। व्यापार सब चौपट हो गया। बालक का शिक्षण-प्रशिक्षण विषम परिस्थितियो के कारण समुचित रूप से नही हो सका। माता ने साहस बटोरकर बालक का पालन-पोषण किया। वालक अमर ही उसकी आशा का अमर धन था। आशा और विश्वास के सहारे मानव भयावह स्थितियो पर भी काबू पा लेता है। अ ग्रेजी की कहावत हैं **"Every Cloud has a Silver line"** अर्थात् सघन से सघन काले वादल मे भी प्रकाश की एक रेखा अवश्य विद्यमान रहती है। वालक प्रकृति के कोमल करो मे वडा होने लगा।

सवत् १९६७ का काल था। महासती सिरहकुँवर जी, विदूषी ज्ञानकु वर जी म सा का चातुर्मास भोपालगढ मे कराने का श्रावक-श्राविकाओ की ओर से वडा प्रयास किया गया और महासती जी ने श्रावको की प्रार्थना भी स्वीकार कर ली।

वालक और माँ दोनो महासतियो की सेवा मे जाने लगे उनके उपदेशामृत का पान कर वे अपने दु ख को प्राय भूलने लगे। "होनहार विरवान के होते चिकने पात" इस कहावत को चरितार्थ करते हुए होनहार अमर घटो स्थानक मे वैठ सतियाँ जी म सा के प्रवचनो को आत्मसात करने लगा। वह सोचता क्या दु ख सबको सताते हैं ? वे क्यो सताते हैं ? जव कभी वह किसी सत अथवा साध्वी को रुग्ण देखता तो उसके मन मे विचार आता दु ख किसी को नही छोडता आखिर यह क्यो ? इस प्रकार आशा-निराशा मिश्रित अनेको विचार वालक के मानस मे उठने लगे।

आशा और विश्वास के वल पर ही मानव जीवन की सरिता प्रवाहित होती है। यदि मनुष्य का स्वय पर विश्वास न रहे तथा उसे अपने सुन्दर भविष्य की आशा न हो तो वह जीवित ही नही रह सकता। बालक अमर के अन्तर मे आत्मविश्वास तो था ही। अव उसे अपना सुन्दर भविष्य बनाने की धुन लगी। वह अपने जीवन-निर्माण के विषय मे अनेक प्रकार के विचार करने लगा। वह अपनी वल-बुद्धि के अनुसार भावी-जीवन के सम्वन्ध मे अनेक प्रकार के ताने वाने वुनता और उधेडता। इस उधेड बुन की धुन मे वह नित्य की तरह स्था.क पहुँचा।

भाद्रपद शुक्ला २ का दिन था। महासती ज्ञानकु वर जी के प्रवचन धारा प्रवाह से चल रहे थे। 'कर्म' विषय पर वे व्याख्यान दे रही थी। उन्होने ज्ञाता सूत्र का सुन्दर दृष्टान्त प्रस्तुत किया "तुम्वा जल की सतह पर तैरता है क्योकि वह हल्का होता है। किसी ने उसे निकाल कर उस पर मिट्टी और सन के एक नही पर आठ लेप लगा दिये और उसे सरोवर के जल मे छोड दिया। भला सोचिये वह पानी की सतह पर रहेगा या सरोवर के जल मे डूबेगा ? निश्चय ही वह जल मे डूबेगा। क्यो ? इसलिए कि उस

पर सन और मिट्टी के आठ चिकने एव मजबूत लेप जो कर रक्खे हैं। वे लेप जब पानी मे उतर जावेगे तो वह पुन पानी की सतह पर तैरने लगेगा। ठीक यही अवस्था आत्मा की है। जब तक आत्मा पर आठ कर्मो का लेप रहता है। आत्मा भवसागर मे डूबा रहता है। ज्यो ज्यो कर्मों का भार कम होता जाता है त्यो-त्यो वह अपने मूल स्वभाव और गुणो मे स्थित होता जाता है। हे भव्यात्माओ! श्रावक और श्राविकाओ! अगर आप अपनी आत्मा को ऊँचा उठाना चाहते हैं तो अपने कर्मरूपी मैल को धोने का प्रयास करते रहो।

अमर बडी तन्मयता से प्रवचन सुन रहा था। उसने बाल सुलभ सरलता से प्रश्न किया—"महाराज! यह कर्मरूपी मैल किस वस्तु से धुलेगा? बालक के सहज भाव मे किये गये प्रश्न को सुन महासतीजी क्षण भर के लिए अवाक् सी रह गई। इस छोटे से बालक के मानस मे यह प्रश्न कैसे उठा? महासती ने बालक की जिज्ञासा को शान्त करते हुए कहा—"कपडे का मैल कब मिटता है? क्षार और जल से धोने पर ही वही बात आत्मा के मैल के साथ भी लागू होती है। कर्मरूपी मैल को सयम-रूपी जल एव तप रूपी क्षार से धोने पर आत्मा पूर्ण निर्मल निर्विकार बन सकती है।" कहने का अभिप्राय यह है कि सयम, त्याग और तपस्या के द्वारा आत्मा को निर्मल, स्वच्छ और निर्विकार बनाया जा सकता है। आत्मा की यह निर्मलता वीतराग भाव से होती है, कषाय विहीन भाव से होती है। कषाय रहित वीतराग उपदेश धारा को ही शुद्ध उपयोग कहते हैं। यही बन्धन मुक्ति का हेतु है। साता वेदनीय कर्म क्या है? पुण्य प्रकृति का प्रभाव! उससे चक्रवर्ती सम्राट तक का वैभव प्राप्त होता है, ससार के सब सुख मिलते हैं–धन-सम्पति भी प्रचुर मात्रा मे प्राप्त होती है। फिर उसे डुबाने वाला क्यो कहा गया है? उच्च गौत्र, मान-प्रतिष्ठा, श्री सम्पन्नता आदि सब शुभ योग के प्रतिफल होते हैं। शुभ योगो से शुभ कर्मो का बन्ध होता है किंतु आगमो की वाणी मे तो यह भी तारने वाला नही है। याद रखिये जिस प्रकार अशुभ योग जन्य दुष्कर्म आत्मा को गिराने हैं। उसी तरह शुभ योग जन्य पुण्य बध भी आत्मा को ससार मे अटकाते है अर्थात

रोके रखते है क्योकि अन्ततोगत्वा वे भी तो बध ही है। अभिप्राय इसका यह है कि पाप और पुण्य दोनो ही आत्मा को भव बेडी मे जकडे रखने वाले है। अ तर केवल इतना मा हे कि एक लोहे की शृ खला है तो दूसरी सोने की। इस प्रकार जैन दर्शन ने आत्मा की उत्कर्षता और अपकर्षता का मापदड स्वर्ग या नर्क नही माना है। वह तो पूर्णत आत्म शुद्धि को ही श्रेयस्कर मानता है। निर्मलता और पवित्रता को अ गीकार करता है। हमारा योग जब शुभ-अशुभ से हटकर शुद्ध की ओर बढता है तब आत्मा निर्लेप निष्कलक और पवित्र बनती है।

हमारी जितनी भी धर्म क्रियाये है, विधिविधान हैं–वे सब वीतराग भाव की ओर उन्मुख करने वाले साधन हें। जब भावो मे पवित्रता आती है–राग द्वेष मद पडते है। तभी वे सब क्रियाए सफल मानी जाती है।

बालक महासती जी की बाते सुन विचारो मे डूबा सा रहने लगा। अ त मे उसने एक दिन अपनी माता से कहा "माँ! मैं भी साधू बनूँगा।" माता तो पहले ही इस दिशा मे प्रयत्नशील थी वह स्वय भी कर्मो की निर्जरा के लिए उत्सुक थी। किंतु आखिर ममतामयी माँ का हृदय ही तो ठहरा। अधखिले पुष्प तुल्य अपने नौनिहाल की बात सुन कर उसके हृदय को आघात पहुँचा। वह सोचने लगी–यही तो एक मात्र मेरी आशाओ का केन्द्र, मेरे अन्धेरे घर का दीपक, मेरी आँखो का तारा, जीवन-धन, प्राण, सबल और सर्वस्व है। अब यह भी मुझे असमय मे असहाय छोडने का विचार कर वज्र कठोर हृदय बन रहा है। हाय रे दुर्देव! पर भला प्रारब्ध को कौन पलट सका है? पुत्र के इस दृढ निश्चय के समक्ष माँ की ममता के बन्धन शनै -शनै ढीले पडने लगे।

माँ और पुत्र महाविदुषी महासती श्री ज्ञानकु वर जी के सान्निध्य मे रहकर वैराग्य की ओर पूर्णत अग्रसर होने लगे। विशुद्ध धार्मिक दिनचर्या बिताते हुए एक दिन बालक अमर ने भागवती दीक्षा ग्रहण करने की अपनी आन्तरिक आकाक्षा महासती जी के समक्ष प्रगट की। महासती जी ने कहा—"अभी किसलय हो, साधु की दिनचर्या बडी ही कठोर और

बडे-बडे धीर वीर पुरुषो के हृदयो को भी प्रकम्पित कर देने वाली होती है।" अभी ठहरो, अभ्यास करो। दुःख कष्ट और पीडाओ को सहन करने की क्षमता सचित करो। दीक्षा तो मिल जायगी किन्तु इतना स्मरण रखो कि इस ओर बढे कदम पुनः वापस नही लौटेगे।

महासती जी ने सोचा अभाव और अभियोगो ने मा और पुत्र दोनो को जर्जरित कर दिया है। हो सकता है अर्थाभाव ने इन्हे ऐसा करने के लिए विवश किया हो। प्रायः कष्टो की बात मानव मन मे विरागता को जन्म देती है किन्तु वह अस्थिर होती है। जैसे पानी उतर जाने पर नदी पुन अपने पूर्व स्वरूप मे आ जाती है वैसे ही अभाव का कष्ट मिटने पर वैराग्य भी ओझल होता दिखाई देता है। बालक अमर ने बार-बार अनुरोध और आग्रह भी किया किन्तु महासती जी अभी उसके अभ्यास और सहिष्णुता की परीक्षा लेना चाहती थी अतः उन्होने कहा—चातुर्मास के पश्चात् इस विषय मे सोचेगे। अभी कुछ दिन और ठहरो।' महासती जी से आशान्वित हो माता और पुत्र दोनो विरक्त जीवन विताने लगे।

सकल्पो से जीवन का निर्माण होता है तथा शुभ सकल्पो का प्राबल्य समस्त बाधाओ एव अवरोधो को दूरकर अपना पथ प्रशस्त बना लेता है। मन की भूमि मे विचारो का जैसा बीज पडता है उस ही के अनुरूप फल आते है। बालक अमर सचमुच दृढ सकल्पी था। उसके मानस मे सद्विचारो का बीजारोपण हो रहा था—वह भोग पथ का परित्याग कर वैराग्य की ओर अग्रसर होने लगा। जीवन को पवित्र और मगलमय बनाने मे शुभ सकल्प सबसे बडे सहायक साधन है। बालक दृढ सकल्प के साथ अपने लक्ष्य की ओर द्रुतगति से बढने लगा।

ॐ

आत्म निष्ठ साधक की दृष्टि मे काम-भोग रोग के समान है।

—भगवान महावीर

भगवती दीक्षा

"मानव क्या, जो रोते रोते, चल बसे ससार से।
दिखा प्रचण्ड उत्कर्ष अपना, जो न भव निस्तार दे॥"

ससार मे उस ही व्यक्ति का जीवन सार्थक है जो मोह, माया, ममता, आशा-तृष्णा से ऊपर उठकर उत्कर्ष की ओर अग्रसर होता है, जिसकी जीवनचर्चा का प्रत्येक कार्य आत्म-कल्याण के साथ-साथ लोक-कल्याण की भावनाओ से ओतप्रोत होता है। बालक इस ही भावना से अनुप्राणित हो दीक्षा के दुरुह पथ की ओर साहस, निष्ठा और विश्वास के साथ आगे बढने लगा। विश्व के प्राय प्रत्येक साधक के समक्ष एक ही सनातन लक्ष्य रहा है "और वह निष्पाप जीवन-यापन का, निष्पाप जीवन किस प्रकार बिताया जाय"—मानव हिसक और पाप प्रवृतियो से अपने को कैसे बचावे ? पापो से, दोषो से मुक्ति कैसे मिले ? यह कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन पर प्रत्येक साधक विचार करता है और इनका समाधान भी ढूँढता है। उसका यह विचार यथार्थ भी है क्योकि जब कभी वह किसी भी प्रकार की कोई क्रिया करता है तो किसी न किसी अ श मे हिमा होती ही है। विश्व के विवेकशील व्यक्तियो, विचारको, तत्ववेत्ताओ और दार्शनिको ने अपने-अपने ढग से समय-समय पर इन प्रश्नो पर विचार किया है। किसी ने कर्तव्य क्षेत्र से पलायन करने की बात कही, तो किसी ने कर्तव्य से च्युत होने की चर्चा की। क्या जीवन का वास्तविक सत्य यही है ? श्रमण भगवान् महावीर ने इस प्रश्न का समाधान करते हुए फरमाया—"साधना जीवन से ऊब कर भागने मे आनन्द नही—आनन्द तो जीवन की दिशा बदलने मे है, उसे नया मोड देने मे है। ऊबकर जीवन मे छुटकारा लेने की कल्पना कायरता और कुत्सित अनार्यजुष्ट वृत्ति है। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे फरमाया—"ओ साधक उस ! शाश्वत शिव सुख की प्राप्ति के लिए अहर्निश प्रयास कर, क्षण भर के लिए भी प्रमाद मत कर। जब तक जीओ उस सनातन सुख की प्राप्ति के लिए जीओ। उस सुख की प्राप्ति के

विचारो और प्रयासो से अपने जीवन के प्रत्येक सांस को सुखद बनाने की चेष्टा करो। साधना का सही अर्थ तो जीवन की दिशा बदलना है—जो कुछ करना है उस शाश्वत सुख को प्राप्त करने के लिए सयम के साथ करो। प्रत्येक क्रिया के साथ विवेक की आंख खुली रक्खो। याद रक्खो–"अहिंसा की कसौटी विवेक है।" चलते, फिरते, बैठते आदि क्रियाओ मे मन, वचन और कर्म के योग से होने वाले स्पन्दन मे पाप होता है पर यदि विवेक और यतना के साथ प्रवृत्ति की जाय तो पाप का वध नही होता। बालक अमर के सम्मुख भी यही प्रश्न आया। विषय कषाय पर कैसे काबू पाया जाय। आखिर उसने निश्चय किया कि पाप की छाया से भी वह सदा दूर रहेगा, जीवन भर कभी भोग की कल्पना तक न करूँगा। सन्त बनने का दृढ सकल्प लिये वह निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर मन्थर-गति से बढने लगा। एक दिन पुत्र और माता दोनो स्वामीजी श्री चन्दनमलजी म सा के पास जोधपुर पहुँचे और उनके सम्मुख उन्होने अपनी इच्छा व्यक्त की। मुनि श्री का भी वही उत्तर था। "किशोर कुमार के विचार प्राय परिपक्क नही माने जाते। वह साधू की क्रियाओ का निर्वहन करने मे शिथिल भी हो सकता है।" उन्होने सहसा दीक्षा देने मे अपनी असमर्थता प्रकट की और कहा "अभी और अभ्यास करो कष्टो से जूझने की क्षमता प्राप्त करो। कष्ट दुनिया को कहने के लिए नही होते, वह तो धैर्यपूर्वक सहन करने के लिए ही होते हैं। विजय श्री उस वीर का वरण करती है जो प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी जीवट के साथ जूझता है, दु ख मे रोता नही, धैर्य खोता नही" बालक की आँखो मे सहसा आसू छलक उठे। वह सोचने लगा—"दीक्षा कठोर परीक्षा लेती है।" समीप ही बैठे एक श्रावक ने कहा घबराओ नही दीक्षित अवश्य होवोगे। दीक्षा की सम्पूर्ण तैयारी करलो और याद रक्खो "हलाहल भवसागर का शिवशकर ही पीते हैं।"

मनुज दुग्ध से, दनुज रक्त से, देव सुधा से जीते हैं।
किन्तु हलाहल भवसागर का, शिवशकर ही पीते हैं।

—राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

पास मे बैठे सब ही श्रावको ने कहा "महाराज सा । बालक सत्कर्मी है। शुभ सकल्पो से इसका जीवन क्रम, प्राय बदल चुका है। निश्चयवान् प्रतीत होता है। कभी-कभी आयु रेखा से पूर्व भी ऐसे सस्कार प्रबल होते देखे जाते हैं। यदि बालक इतना उत्सुक है तो महाराज! आप अवश्य ही उसे दीक्षा दीजिये।

महाराज श्री बडे तत्वचिन्तक और अनुभवी सत थे। सोचा सभवत यह दु खो से व्यथित हो साधु बन जाना चाहता है। बालक सुकुमार और सुडौल है। अभी इसमे अपने भविष्य के सम्बन्ध मे सोचने की क्षमता कहा? मुनि श्री ने कहा "बालक! अभी विश्राम करो-दीक्षा अवश्य होगी। किन्तु समय आने पर। अभी तुमने ससार के सुख-दु खो के दर्शन भी तो नही किये हैं। अभी से इस ओर आने की बात क्यो सोचते हो?"

बालक पुन रो पडा। आखिर मुनिश्री ने दीक्षा देते का आश्वासन दिया और निश्चय भी किया गया कि माघ शुक्ला ७ सवत् १९६७ की शुभ प्रभात वेला मे बालक को भागवती दीक्षा प्रदान की जावेगी। मुनि श्री के मुखारविन्द से दीक्षा की बात सुन बालक प्रसन्न हो उठा

दीक्षा समारोह की तैयारी हुई। हजारो नर-नारी, आबाल-वृद्ध दर्शनार्थ उमड पडे। जोधपुर सिंहपोल मे दीक्षा मडप तैयार किया गया। नित्य प्रति बालक की बदोली निकाली जाने लगी। निश्चित तिथि को प्रात काल से ही मडप के चारो ओर हजारो स्त्री पुरुपो की विशाल भीड एकत्रित हो गई। उत्साह और उल्लास के वातावरण मे मुनि श्री चन्दनमल जी म सा के सानिध्य मे बालक को भगवती दीक्षा दी गई। आपकी मातु श्री सुन्दर कु वर जी ने भी उसी दिन महासती जी श्री ज्ञान कु वर जी म सा की सेवा मे श्रवणी धर्म की दीक्षा ग्रहण की। बालक अमर निर्ग्र थ श्रमण धर्म मे दीक्षित होते ही श्रद्धेय मुनि श्री अमरचन्दजी के नाम से सस्कारित किया गया और जन-जन का वन्दनीय, पूजनीय और भक्तिभाजन बन गया। सत्सग एव त्याग की महिमा का यह अनूठा चमत्कार है। किसी कवि ने सत्सग

एव ईश भक्ति की महिमा प्रकट करते हुए बडे ही सुन्दर शब्दो मे अपने आन्तरिक उद्‌गार अभिव्यक्त किये है —

सुत दारा और सम्पदा, पापी के भी होय ।
सत समागम हरिकथा, दुर्लभ वस्तु दोय ।।

श्रद्धेय अमरचन्दजी तो स्वय सत वनकर जीवन भर के लिए सत समागम मे आये थे। अत उनके बारे मे तो वाणी अथवा लेखिनी से वर्णन करना मेरी शक्ति से परे है। यह सब कुछ उनके पूर्व सचित महान् पुण्यो का ही प्रभाव था।

यो तो ससार मे नित्यप्रति लाखो व्यक्ति जन्म ग्रहण करते और लाखो ही मानव कराल-काल द्वारा कवलित कर लिये जाते हैं। वस्तुत उन्ही का जन्म सफल है, धन्य है जो जीवन पर्यन्त स्व-पर कल्याण मे निरत रहते हुए स्थित प्रज्ञता स्थिति मे मृत्यु का वरण करते है। वाल्यावस्था मे ही स्वपरोपकारैकवृत्ति सन्त बन कर अमर मुनि ने अपना जन्म सफल वना लिया। कोटी-कोटी अभिनन्दन है, उन बाल योगी अमर-मुनि की सम्मोहक मुनि मुद्रा को।

से हु चक्खू मणुस्साण, जे कखाऐ व अन्तऐ

—भगवान महावीर

जिस साधक ने अभिलाषा-आशक्ति को नष्ट कर दिया है, वह मनुष्यो के लिए मार्ग दर्शक चक्षु रूप है।

ध्ययन, चिन्तन-मनन एवं चरण

साधना पथ पर प्रथम चरण रखने के साथ ही बालयोगी अमर-मुनि ने शरीर के साथ छाया के समान गुरु की सेवा एव सन्निधि मे रहते हुए अ गोपाँगादि धर्म-शास्त्रो का अध्ययन प्रारम्भ किया। वे एकाग्र चित्त हो गुरु द्वारा प्रदत्त सूत्र पाठ को बडी लगन के साथ स्मृति पटल पर अ कित कर हृदयगम करते। अमर मुनि को यह विशेषता थी कि गुरुमुख से सुनी हुई भगवान् महावीर की वाणी को चिन्तन-मनन के साथ अपने आचरण मे ढालते। दशवैकालिक सूत्र के—"धम्मो मगल मुकिट्ठ, अहिंसा सजमो तवो"। आदि तथा उत्तराध्ययन सूत्र के —पजोगा विप्पमुक्कस्स, अणगारस्स भिक्खुणो। विणय पाउकरेस्सामि, आणुपुव्वि सुणेह मे।" प्रभृति आदि अमोघ उपदेशो को न केवल स्मरण एव हृदयगम ही करते, अपितु एक एक उपदेश को अक्षरश अपने आचरण मे उतारने का दृढ-सकल्प के साथ प्रयास करते। ज्ञान और क्रिया के समन्वय के कारण उन्होने सत समाज और जन जन के मानस मे विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया।

वैराग्य, विनय, वैयावृत्य, विवेक, विशालहृदयता, मार्दव, मित-भाषिता, ऋजुता, अनुशासनप्रियता, अनासक्ति, कष्ट-सहिष्णुता, आत्म-रमण आदि जो उत्तम गुण एक आदर्श साधक मे होने चाहिये, वे सब गुण अमर मुनि के अन्तरग और बाह्य आचरण मे समान रूप से उद्भूत हुए और उनके अन्तिम श्वास तक उनमे विद्यमान रहे। एक आदर्श साधक की इससे बढ कर और क्या उपलब्धि हो सकती है। इन्ही गुणो के कारण वे गुरुजनो के प्रीति भाजन और अन्य सतो के श्रद्धेय बन गये।

एक दिन गुरु के मुखार विन्द से अमर मुनि ने भगवान महावीर के साधना काल का एक महान् प्रेरणा प्रदायी सुन्दर सस्मरण सुना। साधना काल मे भगवान् महावीर को अज्ञानी एव दुष्ट प्रकृति पुरुषो के द्वारा घोराति घोर उपसर्ग (कष्ट) दिये जाने लगे तो देवराज ने उनकी

सेवामे उपस्थित हो साञ्जलि शिर झुकाते हुए प्रार्थना की—"प्रभो ! अनेक उपद्रवो और घोर कष्टो के माध्यम से अज्ञानियो द्वारा आपकी साधना मे वाधाए उपस्थित किये जाने के हृदय विदारक प्रयास किये जा रहे है। भगवान् मेरी आन्तरिक इच्छा है कि जव तक आपको कैवल्योपलब्धि नही हो जाय तब तक अहर्निश आपकी सेवा मे प्रस्तुत रहूँ और आपकी साधना मे किसी प्रकार की वाधाए उपस्थित न होने दूँ।"

प्रभु महावीर ने उत्तर फरमाया—"देवराज ! तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे पद के अनुरूप है। पर तुम्हे यह विदित होना चाहिए कि "सिद्धिया केवल स्वय के पुरुषार्थ के द्वारा ही प्राप्त की जाती हैं, न कि दूसरे के सहारे से। आज तक जितने तीर्थङ्कर हुए हैं, उन्होने अपने पौरुष के वल पर ही कैवल्य की उपलब्धि की है।"

देवराज से श्रद्धावनत हो सूर्य के समान प्रकाशमान मणि जटित मुकुट से सुशोभित अपना मस्तक प्रभु के चरणो पर रख दिया और प्रभू को भाव भीनी भक्ति सहित वन्दन करता हुआ अपने सदन की ओर लौट गया।

प्रभु के साधना जीवन का साहस वर्धक सस्मरण सुनकर अमर मुनि भाव विभोर हो गये। उनके हृदय पर इसकी गहरी छाप जम गई। उन्होने उसी क्षण से स्वावलम्बन का दृढ सकल्प किया और जीवन भर स्वावलम्बी रहे। उनकी आत्मनिर्भरता की उनके स्वावलम्बन की साधक समाज मे सदा श्रद्धा के साथ सराहना होती रही।

अमर मुनि के जीवन की एक बडी विशेपता यह भी थी कि वे अधिकाशत आत्म-चिन्तन मे तल्लीन रहते थे। स्वाध्याय को आत्म विकास का सर्वोत्कृष्ट साधन और साधक जीवन का सबल समझकर उन्होने अपनी दैनदिनी का अनिवार्य अङ्ग बना लिया था। वस्तुत यह एक शाश्वत सत्य भी है कि स्वाध्याय से तन्मयता आती है और तन्मयता ही आध्यात्मिक चरमोत्कर्ष की जननी है।

स्वाध्याय आत्म रमण और साधक के उपरोक्त उत्कृष्ट गुणो के कारण उनका व्यक्तित्व इतना सौम्य सुखद और सम्मोहक बन चुका था कि उनके नेत्र-युगल, मुखमुद्रा और अङ्ग-प्रत्यङ्ग से शाति की अविरल धारा अनवरत रूप से प्रवाहित होती रहती थी जो दर्शनार्थियो को दर्शनमात्र से ही अनिर्वचनीय आनन्द प्रदान कर अनकहे ही सब कुछ कह देती थी।

ध्ययन, चिन्तन-मनन एवं ाचरण

साधना पथ पर प्रथम चरण रखने के साथ ही बालयोगी अमर-मुनि ने शरीर के साथ छाया के समान गुरु की सेवा एव सन्निधि मे रहते हुए अ गोपांगादि धर्म-शास्त्रो का अध्ययन प्रारम्भ किया। वे एकाग्र चित्त हो गुरु द्वारा प्रदत्त सूत्र पाठ को वडी लगन के साथ स्मृति पटल पर अ कित कर हृदयगम करते। अमर मुनि को यह विशेषता थी कि गुरुमुख से सुनी हुई भगवान् महावीर की वाणी को चिन्तन-मनन के साथ अपने आचरण मे ढालते। दशवैकालिक सूत्र के—"धम्मो मगल मुकिट्ठ, अहिंसा सजमो तवो"। आदि तथा उत्तराध्ययन सूत्र के —पजोगा विप्पमुक्कस्स, अणगारस्स भिक्खुणो। विणय पाउकरेस्सामि, आणुपुव्वि सुणेह मे।" प्रभृति आदि अमोघ उपदेशो को न केवल स्मरण एव हृदयगम ही करते, अपितु एक एक उपदेश को अक्षरश अपने आचरण मे उनारने का दृढ-सकल्प के साथ प्रयास करते। ज्ञान और क्रिया के समन्वय के कारण उन्होने सत समाज और जन जन के मानस मे विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया।

वैराग्य, विनय, वैयावृत्य, विवेक, विशालहृदयता, मार्दव, मित-भाषिता, ऋजुता, अनुशासनप्रियता, अनासक्ति, कष्ट-सहिष्णुता, आत्म-रमण आदि जो उत्तम गुण एक आदर्श साधक मे होने चाहिये, वे सव गुण अमर मुनि के अन्तरग और बाह्य आचरण मे समान रूप से उद्भूत हुए और उनके अन्तिम श्वास तक उनमे विद्यमान रहे। एक आदर्श साधक की इससे वढ कर और क्या उपलब्धि हो सकती है। इन्ही गुणो के कारण वे गुरुजनो के प्रीति भाजन और अन्य सतो के श्रद्धेय वन गये।

एक दिन गुरु के मुखार विन्द से अमर मुनि ने भगवान महावीर के साधना काल का एक महान् प्रेरणा प्रदायी सुन्दर सम्मरण सुना। साधना काल मे भगवान् महावीर को अज्ञानी एव दुष्ट प्रकृति पुरुषो के द्वारा घोराति घोर उपसर्ग (कष्ट) दिये जाने लगे तो देवराज ने उनकी

सेवामे उपस्थित हो साञ्जलि शिर झुकाते हुए प्रार्थना की—"प्रभो ! अनेक उपद्रवो और घोर कष्टो के माध्यम से अज्ञानियो द्वारा आपकी साधना मे बाधाए उपस्थित किये जाने के हृदय विदारक प्रयास किये जा रहे है। भगवान् मेरी आन्तरिक इच्छा है कि जब तक आपको कैवल्योपलब्धि नही हो जाय तब तक अर्हनिश आपकी सेवा मे प्रस्तुत रहूँ और आपकी साधना मे किसी प्रकार की बाधाए उपस्थित न होने दूँ।"

प्रभु महावीर ने उत्तर फरमाया—"देवराज ! तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे पद के अनुरूप है। पर तुम्हे यह विदित होना चाहिए कि "सिद्धिया केवल स्वय के पुरुपार्थ के द्वारा ही प्राप्त की जाती है, न कि दूसरे के सहारे से। आज तक जितने तीर्थङ्कर हुए हैं, उन्होने अपने पौरुप के बल पर ही कैवल्य की उपलब्धि की है।"

देवराज से श्रद्धावनत हो सूर्य के समान प्रकाशमान मणि जटित मुकुट से सुशोभित अपना मस्तक प्रभु के चरणो पर रख दिया और प्रभू को भाव भीनी भक्ति सहित वन्दन करता हुआ अपने सदन की ओर लौट गया।

प्रभु के साधना जीवन का साहस वर्धक सस्मरण सुनकर अमर मुनि भाव विभोर हो गये। उनके हृदय पर इसकी गहरी छाप जम गई। उन्होने उसी क्षण से स्वावलम्बन का दृढ सकल्प किया और जीवन भर स्वावलम्बी रहे। उनकी आत्मनिर्भरता की उनके स्वावलम्बन की साधक समाज मे सदा श्रद्धा के साथ सराहना होती रही।

अमर मुनि के जीवन की एक बडी विशेपता यह भी थी कि वे अधिकाशत आत्म-चिन्तन मे तल्लीन रहते थे। स्वाध्याय को आत्म विकास का सर्वोत्कृष्ट साधन और साधक जीवन का सबल समझकर उन्होने अपनी दैनदिनी का अनिवार्य अङ्ग बना लिया था। वस्तुत यह एक शाश्वत सत्य भी है कि स्वाध्याय से तन्मयता आती है और तन्मयता ही आध्यात्मिक चरमोत्कर्ष की जननी है।

स्वाध्याय आत्म रमण और साधक के उपरोक्त उत्कृष्ट गुणो के कारण उनका व्यक्तित्व इतना सौम्य सुखद और सम्मोहक बन चुका था कि उनके नेत्र-युगल, मुखमुद्रा और अङ्ग-प्रत्यङ्ग से शाति की अविरल धारा अनवरत रूप से प्रवाहित होती रहती थी जो दर्शनार्थियो को दर्शनमात्र से ही अनिर्वचनीय आनन्द प्रदान कर अनकहे ही सब कुछ कह देती थी।

सेवाभावी साधक

प्राय मुनि श्री कहा करते थे- -"समाज मे प्रतिष्ठा और सम्मान उन लोगो को मिलता है जो नि स्वार्थ भाव से बढकर आगे आते है, सेवा मे जुटते हैं, सघर्ष मे जूझकर भी जो भाल पर लेश मात्र भी सल नही डालते। जो लोग पीछे हैं कोने मे छिपकर बैठे हैं उन्हे ससार मे सत्कार का उपहार नही मिलता।" कहने का आशय यह है कि मनुष्य जाति से ऊ चा नही उठता, वह तो कर्म से ऊ चा उठता है।

मुनि श्री का समग्र जीवन ही सेवा का उत्कृष्ट उदाहरण था। कबीर ने भी इस प्रसग पर बोलते हुए कहा है —

"वृक्ष कबहु नहीं फल भखै, नदी न सचै नीर।
परमारथ के कारन, साधुन घरा शरीर।।"

साधु का जीवन ही परमार्थ के लिए होता है। वह स्वय का कल्याण करते हुए जब जन का कल्याण करता है। मानव मे जिन गुणो का विकास देख कर प्रत्येक सहृदय मनीषी, मत्रमुग्ध हो जाते हैं, वे सब उनकी परार्थ बुद्धि की उर्वरता का ही प्रतिफल है। स्वार्थ बुद्धि मानव को गिराती है और परार्थ बुद्धि मानव को ऊँचा उठाती है। दया, प्रेम, स्नेह, त्याग और सेवा सब परार्थ बुद्धि के पुण्य प्रताप से ही जागृत होते हैं। महाराज श्री का आदि से अन्त तक का समूचा जीवन ही सेवा भाव से ओत-प्रोत था। आप अपने गुरु श्री चन्दनमल जी म सा की सेवा उनके जीवन के अन्तिम क्षण तक करते रहे। आपके दीक्षा गुरु स्वामी श्री चदन-मल जी म सा भी एक त्यागी, तपस्वी, विचारक और सेवाव्रती सत थे। उनका अध्ययन और चिन्तन गहन था। मुनि श्री की भाषण शैली बडी सरस और प्रभावोत्पादक थी। भावो तथा वाणी का सामञ्जस्य बडा ही मनोहारी था। कठिन से कठिन गहन विषय को भी स्वामी जी श्री चदन-मल जी म सा बडे सरल और सहेतुक स्वाभाविक ढग से श्रोताओं के

समक्ष प्रस्तुत करने मे सिद्धहस्त थे । वाणी का माधुर्य भावो की सरसता तथा शैली का श्रोज उनके गहन ज्ञान का परिचायक था ।

गुरुदेव श्री चदनमल जी म सा की देह लीला समाप्त होने पर श्री अमरचन्द जी म सा अपने ज्येष्ठ गुरु भ्राता स्वामी जी श्री भोजराज जी म के साथ आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा की सेवा मे आ गये और आचार्य श्री के सानिध्य एव सेवा मे रहते हुए ज्ञान ध्यान करते रहे।

आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री भोजराज जी म सा भी उत्कृष्ट सेवाभावी सत थे । आपने अपने जीवन काल मे आचार्य श्री विनयचन्द्र जी म सा आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म सा एव वर्तमान आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा प्रमुख तीन महान् आचार्यो की सेवा उत्कृट भावो के साथ की । सेवा का ये महान् सद्गुण आपको अपने बडे गुरु भ्राता श्री भोजराज जी म सा स प्राप्त हुआ ।

जिस सेवा धर्म के लिये कहा गया है कि—"सेवाधर्मो परमगहनो-योगिनामध्यगम्य " उसे अमर मुनि ने अपने जीवन का सहचर वना लिया था । साधु सतो की सेवा सुश्रुषा करना, उनके लिए आहार जल लाना इन सब कार्यो को श्री अमर मुनि ने स्वेच्छा से अपना आवश्यक कर्तव्य वना लिया था । प्रमाद और आलस्य तो उन्हे छू भी नही सका था आचार्य श्री शोभाचन्द जी म सा आपके इन विशिष्ट गुणो से प्रभावित थे और उन्हे आपसे विशेष स्नेह था ।

वस्तुत सेवा सत्-चित् आनन्द और आत्मीयता की अनुभूति है । कोई भी सत्कर्म जव आनन्दातिरेक के साथ किया जाता है तो अनिर्वचनीय आत्म स्वरूप के अर्थात् भगवत् स्वरूप के दर्शन होते हैं । इस अर्थ मे मुनि श्री अमरचन्द म सा की सेवा वास्तव मे सेवा का सच्चा स्वरूप था ।

सच्चे सत का जीवन फिक्र का फाका करने वाली फक्कड वृत्ति ओलियावृत्ति से ओतप्रोत अद्भुत और आनन्दमय होता है । उसमे कृत्रिमता लेशमात्र को भी नही होती । दर्शक उसकी स्वाभाविक सादगी

और सरलता से प्रभावित हुए विना नही रहता । स्व श्री अमर मुनि ऐसे ही निष्पृही सच्चे सत थे ।

सवत् १८८३ मे जव आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म सा का देहावसान हो गया तो कुछ काल तक सघ सचालन का भार श्री सुजानमलजी म सा के कन्धो पर आया । उस समय अमरचन्दजी म सा जिस प्रकार पहले आचार्य श्री की सेवा मे रहते थे । उसी तरह श्री सुजानमलजी म सा के साथ मे सेवारत रहने लगे । आप अपनी अनूठी सूझ-वूझ और सेवा भाव के कारण म श्री के अन्तरग विश्वासपात्र एव अनुगामी वने । आपने सघ स्थित सघाड़े को अपना अभीष्ट योग दिया तथा सुजानमलजी म सा के जीवनकाल मे ही अपने गुरु भाई आत्मार्थी श्री हस्तीमल जी म सा को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित कराने मे अपना अपेक्षित सहकार भी दिया अमरमुनि आयु की दृष्टि से आचार्य श्री हस्तीमलजी म सा से वड़े थे, किन्तु आप अनुशासन को सर्वोपरि महत्व देते थे, अत आचार्य श्री की प्रत्येक इ गित को, इच्छा को स्वेच्छा से आदेश समझकर उसकी अनुपालना करते थे । स्व अमरमुनि की आचार्य श्री के प्रति निष्ठा आज भी मत समाज मे आदर्श उदाहरण के रूप मे प्रस्तुत की जाती है । स्व अमर मुनि की पूज्य श्री के प्रति अटूट श्रद्धा थी । उन्होने पूज्य श्री के साथ अनेक चानुर्मास किये । उन सभी पावस प्रवासो मे आप स्वेच्छा से आचार्य श्री की व्यवस्था का दायित्व ग्रहण करते और उसे समुचित रूप से निभाते रहे ।

सक्षेप मे स्व अमर मुनि मधुमक्खी के सदृश थे जो विभिन्न परम्पराओ तथा विविध शास्त्रो का रस पान कर मधु के रूप मे समाज को वोध का मिठास देते थे तथा अपने जीवन की सद्वृत्तियो से समाज को
वोध का मिठास देते थे तथा अपने जीवन की सद्वृत्तियो से समाज को
विना कुछ कहे ही दिशा दिखाते थे ।

मनुष्य अपने सद्गुणों से ही पूज्यनीय वनता है ।

—आ० श्री हस्ति०

अदृष्टपूर्व सरलता, सहिष्णुता और साहस

सत जीवन की सबसे बडी उपलब्धि है युगलियो के समान सहज सरलता सर्व सहा पृथ्वी के समान सहिष्णुता और उत्कट योद्धा से भी बढकर साहस, सरलता, सहिष्णुता और साहस आदि उत्कृष्ट गुण उसी साधक मे सम्पूर्ण रूपेण साकार होते हैं जिसने सच्चिदानन्द स्वरूप आत्म-तत्व से पौद्गलिक जड तत्व की भिन्नता को समीचीन रूप से समझकर इस शाश्वत सत्य को अपने जीवन के समस्त कार्यकलापो मे अपनी दैनन्दिनी की प्रत्येक क्रिया मे ढाल लिया है। अपनी साधना के सहारे साधक द्वारा इस प्रकार की स्थिति प्राप्त कर लिये जाने के पश्चात् विकट से विकटतम प्रतिकूल एव उत्कृष्ट से उत्कृष्टतम सुखद अनुकूल परि-स्थितियो का उस साधक पर कोई प्रभाव नही होता। उस साधक को उत्तराध्ययन सूत्र के शब्दो मे—"मिहिलाए डज्झमाणीए, नमे डज्झइ किचण।" सच्चा वीतराग गीता के शब्दो मे—

"दु खेष्वनुद्विग्नमना, सुखेषु विगत स्पृह।
वीतरागमय क्रोध· स्थितधी मुनिरुच्यतै ॥

सच्चा मुनि और शाति पर्व (महाभारत) के शब्दो मे "दान्तस्य किमरण्येन तथा दान्तस्य किं वनै।" सच्चा जितेन्द्रिय कहा गया है। उपनिषदो की भाषा मे इस प्रकार के साधक को सदेह होते हुए भी 'विदेह और वैदिक अथवा पौराणिक भाषा मे जीवन युक्त होते हुए भी उसे 'जीवन मुक्त' कह कर सर्वोच्च सम्मान प्रदान किया गया है।

अमरचन्द जी म सा ने गुरु कृपा एव अपनी साधना के बल पर इस सनातन सत्यको अच्छी तरह पहचान लिया था कि उनका शरीर नश्वर होने के कारण उनके सच्चिदानन्द घन स्वरूप आत्म-तत्व से भिन्न है। इस सत्य को उन्होने हृदयगम किया और साधना एव अभ्यास से अपने जीवन मे इसे साकार रूप से अवतरित कर लिया। "जे एग जाणइ से सव्व जाणई।" सर्वज्ञ प्रभु की इस अमोघ वाणी, तथा—"एक हि साधे सब सधे"—इस लौकिक सूक्ति के अनुसार जड और चैतन्य के विभेद के शाश्वत सत्य को

पहिचानने के फलस्वरूप साधक अमरचन्द जी म सा मे सरलता, सहिष्णुता और साहस साकार हो उठे।

जिस प्रकार अनन्त उन्मुक्त आकाश को कोई वस्त्र से नही ढक सकता ठीक उसी प्रकार साधक के आभ्यन्तर मे उद्भूत हुए गुण छुपाने का प्रयास करने पर भी नही छपाये जा सकते। वे नेत्रो की राह स्वत ही निर्वाध गति से प्रवाहित होते रहते हैं। अमरचन्द जी म सा के अन्तर मे प्रकट हुए साधक के ये सर्वोच्च गुण भी छपे नही रह सके। वस्तुत मुखाकृति प्राणी के आभ्यन्तर का दर्पण है। उनके अन्तर्हृदय मे प्रकट हुए गुण दर्शनार्थियो को ही नही, अपितु प्रत्येक व्यक्ति को दर्शनमात्र से ही अननुभूत शाति एव अनिर्वचनीय आनन्द प्रदान करने लगे। सर्व साधारण की तो बात ही क्या उच्चकोटि के विद्वान साधक श्रमण तक भी अमरचन्द जी म सा के इन आध्यात्मिक गुणो पर मुक्त हो मुक्त कण्ठ से सराहना करने लगे।

सवत् २०१० मे उपाचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा प्रधानमन्त्री व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलाल जी म सा श्री आनन्द ऋषि जीम सा, सहमत्री श्री हस्तीमल जी म सा बहुश्रुत पडित श्री समरथमल जी म सा और कवि श्री अमरचन्दजी म सा इन छ प्रमुख सतो का जोधपुर मे चातुर्मास हुआ। उस समय हमारे चरित्र नायक मुनि श्री अमरचन्दजी म सा भी पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा के साथ थे। एक दिन लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान् सत कवि श्री अमरचन्द जी म सा ने अनेक श्रमण श्रेष्ठो के सम्मुख मुनि श्री अमरचन्द जी म सा के अनुपम गुणो की सराहना करते हुए भाव विभोर हो निम्नलिखित आशय भरे अपने उद्गार अभिव्यक्त किये —

"मुनि श्री अमरचन्द जी महाराज मे सच्चे साधक के अनुरूप सभी गुण विद्यमान हैं। इनकी सरलता से ऐसा आभास होता है कि ये चौथे आरे की बानगी है। इनके समान कष्ट सहिष्णुता कही अन्यत्र देखने मे नही आई। वस्तुत आप साधकोत्तम और इस युग की श्रमण-सस्कृति के गौरव स्वरूप हैं।"

कवि श्री के उद्गार अक्षरश यथार्थता के द्योतक हैं।

साधना की कसौटी

सोना सौ टच का है अथवा उससे कम, इसकी परीक्षा सोने को तीव्र अग्नि मे तपाकर, पिघलाकर, तेजाब मे डाल कर और कसौटी पर कस कर की जाती है। इन अतिकठोर प्रक्रियाओ को सह चुकने के पश्चात् ही प्रमाणित किया जाता है कि सोना विशुद्ध है अथवा नही। इसी प्रकार समाज एव ससार मनीषी भी उसी साधक को सच्चा साधक मानते है जो असाध्य रोगो, मारणान्तिक कष्टो और अन्य सभी प्रकार की प्रतिकूल अथवा अनुकूल परिस्थितियो मे निर्वातस्थ दीप की लौ के समान किंचित मात्र भी विचलित अथवा विकृत नही होता हो, जो सुख और दु ख को बिना किसी हर्ष-विषाद के समभाव से सहन कर लेता है। घोरातिघोर कष्टो के आ पडने पर भी जो कराह तो दूर, ललाट मे सलवट तक नही आने देता हो, विश्व उसी साधक को महामानव मानकर श्रद्धा के साथ उसके चरणो मे शिर झुकाता है।

चरित्रनायक श्री अमरचन्द जी म सा को भी इस प्रकार की एक के पश्चात् अनेक कठोर परीक्षाओ के हृदयद्रावक दौरे से निकलना पडा। वे अनेक वर्षो तक आचार्य श्री के साथ विभिन्न क्षेत्रो मे विहार करते रहे। विहार के समय मे आने वाले शीत-घाम, भूख-प्यास आदि सभी प्रकार के छोटे-बडे परिषहो को उन्होने सदा समभाव से सहा। कठिन से कठिन दु खप्रद परिस्थितियो मे भी उनके मुख पर सदा प्रसन्नता एव शान्ति का अखण्ड साम्राज्य रहा।

वृद्धावस्था मे आपको अन्य छोटे-बडे रोगो के अतिरिक्त एक असाध्य रोग ने आ घेरा। रुग्णावस्था की लम्बी अवधि मे किसी ने एक बार भी उनकी कराह नही सुनी। कराह सुनना तो दूर रहा भाल पर सिकुडन की हल्की सी रेखा भी नही देखी। स्वास्थ्य का हाल पूछने वाले चिकित्सको, सतो और दर्शनार्थियो को मुनि श्री की ओर से सदा मुस्कराहट भरा एक

ही उत्तर सुनने को मिलता सब ग्रानन्द ही ग्रानन्द है ।' इस प्रकार सामना करते उनका ग्रात्मबल उत्तरोत्तर बढता ही गया ।

सयोगवश उन्ही दिनो ग्राचार्य श्री ग्रात्माराम जी म सा से मिलने विषयक सदेश प्राप्त होने पर पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा ने पजाब जाने की भावना से दिल्ली की ग्रोर विहार करने का विचार किया । मुनि श्री की ग्रस्वस्थता ग्रौर ग्रवस्था को दृष्टिगत रखते हुए पूज्य श्री ने उन्हे साथ मे विहार न करने का ग्रनुरोध किया । किन्तु मुनि श्री की साथ रहने की ग्रान्तरिक इच्छा जानकर पूज्य श्री ने ग्रापको साथ लेकर दिल्ली की ग्रोर विहार किया । प्रबल ग्रात्मबल ग्रौर साहस के सम्मुख बडी से बडी बाधाए भी प्रभावहीन हो जाती हैं । रुग्ण होने पर भी ग्रमर मुनि पूज्य श्री के साथ-साथ विहार करते हुए दिल्ली पहुँचे ग्रौर उस वर्ष पूज्य श्री का चातुर्मास दिल्ली सब्जी मण्डी मे हुग्रा । पावस काल मे मुनि श्री की व्याधि ने उग्र रूप धारण कर लिया । लाला बनारसीदास जी, लाला मिलापचद जी एव दिल्ली के वयोवृद्ध लाला रतनलाल जी पारख ग्रादि श्रावको ने मुनि श्री के स्वास्थ्य लाभ हेतु ग्रनेक उपचार करवाये पर उनसे मुनि श्री के स्वास्थ्य मे कोई खास सुधार नही हुग्रा । जोधपुर के लब्ध प्रतिष्ठ वैद्य चाणोद वाले गुरासा ग्रौर दिल्ली के डा लालचन्द जी ने बडी ही लगन के साथ मुनि श्री का उपचार किया । दिल्ली के चिकित्सा विशेषज्ञो ने मुनि श्री के रोग का निदान किया ग्रौर सबने चिन्ता व्यक्त करते हुए एक मत से यह कहा कि मुनि श्री केसर के रोग से ग्रस्त हैं ।

केंसर जैसे भीषण एव ग्रसाध्य रोग का नाम सुनते ही सतवृन्द ग्रौर श्रावक समाज स्तब्ध रह गया । ग्राचार्य श्री ग्रात्माराम जी महाराज साहब ग्रपनी वृद्धावस्था के कारण पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा से साक्षात्कार करना ग्रौर श्रमण सघ के सम्बन्ध मे ग्रावश्यक परामर्श करना चाहते थे । पर इसप्रकार की परिस्थिति मे पूज्यश्री ने पजाबकी ग्रोर विहार का विचार त्याग दिया । पूरे पावसकाल मे मुनि श्री का स्वास्थ्य ठीक नही रहा । डा की सलाह थी कि ग्रसाध्य रोग के कारण मुनि श्री विहार करने की स्थिति मे नही हैं । पर मुनि श्री के निमित्त से दो महान् कल्याणकारी

योजनाओ का शुभारम्भ जयपुर मे होना था। अत वे दिल्ली मे कैसे रुकते। अमरमुनि ने बिहार की इच्छा प्रकट करते हुए कहा—"मै बिल्कुल ठीक हू 'बहता पानी निर्मला, पडा गदीला होय।' इस सूक्ति के अनुसार सतो को जब तक शारीरिक शक्ति बिहार करने के योग्य रहे, तब तक, विचरण करते रहना चाहिए।" मुनि श्री की अद्भुत आत्मशक्ति से सभी बडे प्रभावित हुए।

दूरदर्शी पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा ने मुनि श्री की आन्तरिक इच्छा का आदर करते हुए पहले परीक्षण किया कि रुग्णावस्था मे भी मुनि श्री कितना बिहार कर सकते हैं। प्रतिदिन स्थडिल भूमि आने जाने की दूरी को क्रमश बढाते हुए जब पूज्य श्री को पक्का विश्वास हो गया कि मुनि श्री प्रतिदिन ५-६ माइल का विहार अच्छी तरह कर सकते हैं। तो उन्होने दिल्ली से जयपुर की ओर अपने समस्त सतो के साथ विहार कर दिया। शारीरिक शक्ति के क्षीण होते हुए भी मुनि श्री अमरचन्द जी म सा की आत्म-शक्ति बडी प्रबल थी। वे अम्लान भाव से बिहार करते हुए आचार्य श्री के साथ जयपुर की ओर बढने लगे। बिहार क्रम मे सच्चे साधक की साधना के चमत्कार को सबने प्रत्यक्ष देखा। मार्ग मे पूज्य श्री ने और अन्य सभी सतो ने भी मुनि श्री अमरचन्दजी म से बार-बार अनुरोध किया कि आप डोली मे बैठ जायँ। डोली को अपने कन्धो पर उठाकर वे उन्हे ले जाना चाहते हैं, ताकि उन्हे बिहार मे चलने का कष्ट न हो। पर महान् सेवाव्रती साधक सतो के स्नेह भरे अनुरोध को मधुर मुस्कान के साथ टालते हुए हर-बार यही कहते—"सब आनन्द है।" मैं बिल्कुल ठीक हू। आप मेरी ओर से पूरी तरह निश्चिन्त रहे।

अन्ततोगत्वा वह यात्रा सुख-शांति के साथ सम्पन्न हुई। पूज्य श्री साधक श्री अमरचन्द जी म सा और अन्य सतवृन्द के साथ जयपुर की सीमा मे पधारे। उन महान् साधक की अपरिमेय आत्म-शक्ति का चित्रण लेखनी द्वारा सम्भव नही। जिन्होने कैसर जैसे भीषण रोग से ग्रस्त होते हुए भी दिल्ली से जयपुर तक का इतना लम्बा बिहार

वडी हिम्मत से चलता रहा। पूज्य श्री के आगमन के समाचार जयपुर पहुँचते ही सतो के दर्शनार्थ दिल्ली मार्ग पर बेराठ से ही लोगो का आने-जाने का ताता लग गया और विशाल जनसमूह द्वारा उद्घोपित जयघोपो के वीच पूज्य श्री ने जयपुर मे पदार्पण किया। साधकोत्तम श्री अमरमुनि की कष्ट सहिष्णुता, सौम्यता और सरलता की यशोगाथाएँ घर-घर गाई जाने लगी।

जयपुर पधारने पर समाज द्वारा वडे-वडे डाक्टरो को दिखाया गया पर रोग इतना वढ गया था कि डाक्टर भी उनके आत्मवल को देखकर हैरान हो गये। उनके आत्म-वल के आगे अपना मस्तक झुका दिया यह एक सच्चे साधक की शक्ति थी।

जिस साधक ने अभिलाषा–आसक्ति को नष्ट कर दिया है, वह मनुष्यो के लिए मार्ग–दर्शन चक्षु रूप है।

—भगवान महावीर

महान् कल्याणकारी योजना

अनवरत साधना मे निरत रहने के कारण जिन सतो की, जिन सच्चे साधको की आध्यात्मिक-शक्ति जिस मात्रा मे जागृत हो जाती है, उसी अनुपात से उनके उपदेशो का उनके प्रत्येक उत्तम आचरण का सर्व-साधारण पर, समाज पर प्रभाव पडता है। महान् साधक अपने तप, त्याग, आचरण और उपदेशामृत से समाज की वहिर्मुखी वृत्तियो को मोड देकर अन्तर्मुखी वना, उसके चिन्तन की मनोभूमि को ही परिवर्तित कर देते हैं। इसी कारण सच्चे साधक-सत, युग प्रवर्तक माने गये हैं। इस प्रकार साधक सतो द्वारा परिवर्तित की हुई समाज के चिन्तन की मनोभूमि मे साधारण निमित्त को पाकर किसी भी क्षण किसी जनकल्याणकारी महत्ती योजना का छोटा-सा वीज अ कुरित हो, आगे चल कर विशाल वट वृक्ष का रूप धारण कर लेता है।

पूज्य श्री के साथ अमरमुनि जयपुर पधारे। वे लाल भवन मे विराज रहे थे। उनकी साधना और साहस से समाज का आबालवृद्ध पूर्णत प्रभावित था। उन दिनो भयकर गर्मी पड रही थी। जयपुर के समाजसेवी श्री स्वरूपचन्दजी चोरडिया ने अनुभव किया कि आग की लपटो के समान जलती हुई गर्म हवाओ के झोको से जब स्वस्थ व्यक्ति भी घवरा जाते हैं। फिर मुनि श्री तो व्याधिग्रस्त हैं। अत- लाल भवन के भूमिगत कक्ष (भौहरे) मे यदि रहे तो वहा अपेक्षाकृत ठण्डी जगह होने के कारण उन्हें शान्ति मिलेगी। स्वय चोरडिया जी ने रखे हुए कुछ पुलिंदो को लाल भवन के चौक मे रख भौंहरे को साफ करवाया और उन्होने मुनि श्री से भौहरे मे विराजने की प्रार्थना की महान् कष्ट सहिष्णु साधक अमरमुनि समझ गये कि उनके शरीर को शाति पहुँचाने के निमित्त ही भौहरा साफ किया गया है। अत मुनि श्री ने सहज शात मृदु स्वर मे कहा-"श्रावकजी। यही सब आनन्द हैं। मेरे वहा रहने से पूज्य जी को एव सब सतो को तथा

श्रावको को बार-बार भौंहरे मे उतरने चढने का कष्ट होगा। यही ठी हूँ। मुझे किसी प्रकार का कष्ट नही है।" यह कह मुनि श्री आत्मरम मे लीन हो गये।

पूज्य श्री ने चौक मे तख्ते पर रखे पुलिंदो को देखा। उनमे शास्त्रो की प्राचीन हस्तलिखित प्रतियो व निकले हुए पुराने कागज के पुलिंदे पर जब एकाएक नजर आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज की पडी और इस अमूल्य निधि की यह हालत देखकर श्री सोहनमल जी कोठारी को कहा देख! कोठारी हमारी अमूल्य निधि की यह हालत, दुर्लभ प्राचीन शास्त्र इस अटाले मे पडे हैं इनको कोई देखने वाला नही। इतना सुनकर श्री कोठारी जी उसी दिन से इस कार्य मे लग गये और श्री अमरचन्द जी महाराज ने अपनी बीमारी की परवाह न करते हुए इसमे पूरा सहयोग दिया। आज श्री आचार्य विनय ज्ञान भण्डार समाज के लिए गौरवमयी है। जिसका श्रेय एकमात्र स्व० श्री सोहनमल जी कोठारी को है, जिन्होने अपनी जिन्दगी का सारा समय ज्ञान भडार को सजोने मे लगाकर अपने नाम को अमर कर दिया।

जो बिना किसी विमनस्कता के पवित्र चित्र धर्म मे स्थित है, व निर्वाण को प्राप्त करना है।

—दशा श्रु० ५/

महासंत का महाप्रयाण

रोग के शनै -शनै उग्ररूप धारण करते रहने और जयपुर सघ की अनुनय-विनय पूर्ण प्रार्थना के कारण पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा को रुग्ण मुनि श्री एव अन्य सतो के साथ जयपुर मे रुकना पडा। मुनि श्री द्वारा वार-बार मना करने के उपरान्त भी जयपुर सघ ने मुनि श्री का उपचार कराने मे किसी भी प्रकार की कोइ कसर नही रखी। श्री अमरचन्दजी म ने सत समुदाय और श्रावको के समक्ष स्पष्ट शब्दो मे अनेक वार कहा कि शरीर व्याधियो का घर और नश्वर है। यह एक न एक दिन अवश्यमेव नष्ट होगा। आप लोगो को मेरे इस नश्वर शरीर से मोह नही करना चाहिये। औषधि लेने की मेरी इच्छा नही है। इस पर भी आप औपधोपचार का आग्रह कर रहे हैं तो मुझे केवल आयुर्वेदिक अथवा होमियोपैथिक औषधि ही दीजिये।

डाक्टरो द्वारा अनेक वार अनुरोध किये जाने पर भी श्रीअमरमुनि ने एलोपैथिक औषधि नही ली। कतिपय दिनो के अनन्तर तो उन्होने औषधियो का भी पूर्ण रूप से त्याग कर दिया। रोग-प्रकोप के कारण मुनि श्री की शारीरिक शक्ति तो उत्तरोत्तर क्षीण होती गई, पर यह देखकर सभी को वडा आश्चर्य होता था कि उनकी सहन शक्ति मे, आत्मबल मे कमी आने के स्थान पर अनुदिन अभिवृद्धि होती जा रही थी। वे आत्मचिन्तन मे अधिकाधिक तल्लीन रहने लगे। जयपुर का जैन समाज मुनि श्री के इन अलौकिक गुणो पर मुग्ध होने के साथ-साथ उनके दर्शन को महामागलिक, पुण्यवर्धक और शुभ फल-प्रदायी मानने लगा। दर्शनार्थियो का दिन भर ताता-सा लगा रहता। जो भी दर्शनार्थी जिस समय भी आ गया, उसने उस समय मुनि श्री को स्वाध्याय और आत्मरमण मे तल्लीन पाया। श्रावक श्राविको द्वारा पूछे गये—"सुख शाता है दीनदयाल" इस प्रश्न के उत्तर मे मुनि श्री के मुखारविन्द से मृदुल सम्मोहक स्वर मे कहा

'सब आनन्द है, पूज्य जी की कृपा सू सब आनन्द ही आनन्द है" इन वाक्यो को सुनकर प्रत्येक श्रोता बड़े प्रभावित होते थे।

मुनि श्री का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन गिरता ही गया। पूज्य श्री हस्तीमल जी म सा ने मुनि श्री के पास बैठ कर शास्त्रोक्त विधि से उन्हे अन्तिम आलोचनाए करवाई। आलोचना एव सबसे क्षमापना के पश्चात् अध्यात्म तत्व मे तल्लीन होते हुए महान् सच्चे साधक श्री अमरचन्दजी म सा ने समाधिपूर्वक सम्वत् २०१७ की आषाढ कृष्णा ३ के दिन सध्या के समय ५१ वर्ष की सुदीर्घकाल तक निरतिचार विशुद्ध सयम का पालन करने के पश्चात् ६३ वर्ष की आयु पूर्ण कर देह लीला समाप्त की। आपके स्वर्ग सिधारने का समाचार फैलते ही जयपुर के श्रद्धालु नागरिको में शोक की लहर छा गई। जिसने सुना उसी के मु ह से यही शोकोद्गार निकले– 'एक महान् साधक हमे छोडकर चल बसा।'

मुनि श्री अमरचन्द जी म सा वस्तुत अपने युग के एक महान् साधक थे। अति-दुस्सह कष्ट की घडियो मे भी उनकी मुखमुद्रा पर सदा अक्षोभ्य सागर की सी शान्ति और मधुर मुस्कान ही विराजित रही। अपने साधक जीवन मे कष्ट की कसौटियो पर कसे जाने पर भी वे सौ टच के सोने की तरह सच्चे साधक सिद्ध हुए। अपने जीवन मे अपने सम्मुख प्रस्तुत हुई प्रत्येक परीक्षा मे वे अनूठी शान के साथ पूर्णत सफल हुए। उनके साधनापूर्ण आदर्श श्रमण जीवन ने समाज के चिन्तन का दृष्टिकोण बदल दिया। मुनि श्री की बीमार अवस्था मे सेवा करने वाले सन्तो मे सर्वश्री आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा प मुनि श्री लक्ष्मीचन्द्रजी श्री लघु लक्ष्मीचन्द्रजी, श्री जसवन्त मुनि, श्री चन्द्रजी म सा के नाम विशेष उल्लेखनीय है। सब ही सन्तो ने मुनि श्री की बिमारी मे बहुत श्रद्धा के साथ सेवा की।

सहिष्णुता, सरलता और साकार स्वरूप श्रेष्ठ साधक श्री अमरमुनि को कोटि-कोटि प्रणाम।

"श्रम की सतत् साधना मे-ही, जीवन का उत्थान छिपा है"।

स्व. अमरमुनि और जयपुर

यह पहले बताया जा चुका है कि जयपुर के श्रद्धालु नागरिको पर स्व श्री अमरमुनि का असीम उपकार रहा है और जयपुर का सघ भी अमर-मुनि के आध्यात्मिक गुणो पर पूर्णत अनुरक्त भो रहा है। स्व मुनि श्री के स्वर्गस्थ होने के पश्चात् उनके साधक जीवन के अनुरूप उनकी स्मृति में कोई जन कल्याणकारी स्थायी कार्य प्रारम्भ करने का विचार समाज के मनीषियो के मानस में उत्पन्न हुआ।

जिम दिन मुनि श्री का देहावसान हुआ उसी दिन की वात है, समाज के कतिपय प्रतिष्ठित समाज मेवी एक स्थान पर वैठे विचार मग्न थे। स्व श्री स्वरूपचन्द जी चोरडिया, श्री सागरमल जी डागा, श्री श्रीचन्द जी गोलेछा, श्री खेलशकर दुर्लभ जी, श्री गुमानमल जी चौर-डिया, श्री पारसमल जो डागा व श्री नवरत्नमल जी राका तथा श्री हरिशचन्द जी वढेर आदि सब ही सज्जनो ने एकमत से निश्चय किया कि जयपुर मे समाज की ओर से कोई चिकित्मा व्यवस्था नही है। गरीब तथा मध्यम श्रेणी के लोगो के लिए चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जावे। इस पावन उद्देश्य की पूर्ति के लिये मुनि श्री के नाम पर श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी की स्थापना की गई।

यह सब उस अदृश्य आत्मा की प्रेरणा का प्रतिफल है कि यह सोसाइटी सेवा के क्षेत्र मे शीर्षस्थ है। इस प्रकार मुनि श्री आज भी जयपुर की जनता के मानस मे प्रतिष्ठित हैं और सेवा ही पूजा है, की पावन प्रेरणा दे रहे हैं। जयपुर उनकी सेवा भावना से पुष्पित और पल्ल-वित है—उनका नाम जयपुर तथा श्री अमर जैन मेडिकल सोसाइटी के साथ छाया की तरह जुडा हुआ है।

आज १३ वर्ष वीतने पर जव हम सोसाइटी की गतिविधियो का सिंहावलोकन करते हैं तो सहसा मन प्रफुल्ल हो नाचने लगता है। आज

इस सोसाइटी का वृहत् क्लेवर इस बात का प्रतीक है कि यह सोसाइ
अपने अपेक्षित स्वरूप की ओर पूर्णत उन्मुख है निदान केन्द्र प्रयोगशाल
एक्सरे क्लिनिक, प्रसूति गृह आदि विभिन्न प्रवृतियो से युक्त यह सोसाइ
राजस्थान चिकित्सा क्षेत्र मे विख्यात है।

प्रारम्भ मे एक डाक्टर और एक कम्पाउण्डर से सोसाइटी व
शुभारम्भ हुआ। आज सोसाइटी का निजो भवन है-जो, अमर भव
चौडा रास्ता मे विख्यात है। वर्तमान मे सोसाइटी की सेवा मे, २ डाक्टर,
३ महिला डाक्टर, करीव १५ कम्पाडण्डर व नर्सें, तथा १५ अन्य कर्मचारी
अपनी सेवा सुश्रुषा की भावना से सोसाइटी के लक्ष्य को पूरा
करने मे सलग्न हैं। इसके साथ ही सोसाइटी समय-समय पर बडे-बडे
डाक्टरो की सेवा प्राप्त करती रहती है। अब तक सोसाइटी से करीब १५
लाख रोगियो ने लाभ उठाया है।

यह सब क्या है ? जो कुछ है, वह उस अदृश्य आत्मा की ही
प्रेरणा का प्रतिफल है जो आज भी सोसाइटी की सेवा के क्षेत्र मे कार्य
करने मे सदा आगे रहती है।

मर तुम्हारा नाम सदा ही अमर रहेगा

भृङ्खला की दूसरी कडी ·

आदर्शसन्त :

. श्री लाभचन्द जी हारा हब

(जीवन की ी)

लेखक —

मुनि श्री चौथमल जी महारा ह

नुक्र ि ।

क्या और कहां ?

१	तप पूत	५ से ६
२	सयोग बनाम भाग्य योग्य	७ से १
३	दीक्षा, चिन्तन और मनन	११ से १
४	बिहार और चातुर्मास	१३ से १
५	महा-प्रयाण	१५ से १

स्वर्गीय श्री लाभचन्द जी म० I०

की

जीवन घटनाओं

का

तिथि-क्रम

जन —खे , माह कृष्णा ी, सम्वत् १९५२

दी I—जयपुर, वैसाख शुक्ला तृतीया, , १९७०

—जोधपुर, आसोज कृष्णा ६, , २०२६

१ त्याग और सयम ही जीवन की सार्थकता है।

लेखक —श्री श्रीचद जी म० सा०

२ सयोग और सुयोग।

लेखक —श्री सागरमल डागा

अध्यक्ष श्री अमर जैन मेडिकल रिलिफ सोसाइटी

३ सब तरफ आनन्द ही आनन्द है।

लेखक —श्री सरदारमल चोपडा

४ स्वामी स्व० श्री अमरचन्द जी म० सा०।

लेखक —प० श्री शशिकात झा

५ श्रद्धा के दो शब्द।

लेखिका —साध्वी श्री मैना सुन्दरी जी

तपः पूत

श्रमण सस्कृति का लक्ष्य त्याग, शान्ति, समता और आनन्द है। जीवन के सरक्षण सम्वर्द्धन तथा विकास के लिये आध्यात्मिकता का होना उतना ही आवश्यक है जितना शरीर को अन्न, जल और वायु। यही कारण है कि भारतीय दृष्टिकोण आदिकाल से भोग को त्याज्य समझता है। आज का मानव अनास्था, अनाचार और अशान्ति से ग्रसित है। वह चाहता है कि उसे सुख, शान्ति और सन्तोष की प्राप्ति हो। अत उसके दृष्टिकोण मे वदलाव लाना होगा—उसे जीवन के शाश्वत मूल्यो पर विश्वास करना होगा, उसे यह विश्वास सन्तो के समागम से ही मिलेगा—वही धर्म और दर्शन उसे सुख और सन्तोप देगा जो आत्म-वोध, आत्म-सत्य एव आत्म-ज्ञान की उपज है। उसे दर्शन की बोली मे अध्यात्मवाद कहते हैं। जैन सन्त इम ही अध्यात्मवाद को स्थान स्थान पर जाकर जनमानस मे उडेलते है। बीसवी सदी के ऐसे ही यशस्वी सन्तो मे श्री लाभचन्द्र जी म सा का नाम वडे आदर के साथ लिया जाता है। स्व लाभचन्द्र जी म सा आचार्य श्री भूधर जी म सा की पाट परम्परा के तेजस्वी तपोनिष्ठ तथा प्रतिभा सम्पन्न चारित्रनिष्ठ पूज्य श्री कुशलचन्द्र जी म सा एव आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म सा के शिष्यो मे से थे। स्थानकवासी परम्परा के वे गौरवपूर्ण गरिमा स्वरूप थे।

आप सरल एव सात्विक वृत्ति के सन्त थे। आपका हृदय शिशुसा सुकुमार और पवित्र था। वे अनन्त आकाश से विशाल और सागर से गम्भीर थे। क्रूर और कठोर पाषाण हृदय भी आपका ससर्ग और सानिध्य से करुणामय वन जाते थे। कष्ट सहन करने की प्रवृत्ति आपकी अनूठी थी। आपत्तिओ, कठिनाइयो तथा प्रतिकूल परिस्थितियो मे वे हिमालय के सदृश अडिग रहते थे। उनकी वाणी मे ओज और प्रभाव का सम्मिश्रण था। वे एक विशुद्ध औलिया थे।

आपका जन्म जालोर जिले के खेडा नामक ग्राम मे माघकृष्ण पचमी सवत् १९५२ मे हुआ। आपके पिता स्व अबला जी मालवीय गोत्रीय पटेल थे। आपकी माता श्रीमती दल बाई एक धर्मपरायण महिला थी। आपके बचपन का नाम लादूराम जी था।

मरु प्रदेश मे प्रसूत और शिक्षा सस्कृति मे पालित-पोषित मारवाड के अन्न-नीर द्वारा हृष्ट-पुष्ट शरीर की प्रतिकृति साधना का प्रवाह सजल करने वाला वास्तव मे लाभचन्द्रजी म सा श्रमरण सस्कृति के लाभ थे। लालन-पालन बडे प्रेम से हो रहा था—सुख के दिन बीतते समय नही लगता आप जब केवल १० वर्ष के ही थे कि सिर पर से माता-पिता का हाथ सदा के लिये उठ गया—कौन जानता था कि माता-पिता के वरद् हस्त से भी बढ कर यह बालक भव-भव पीडित मानव को आत्म-कल्याण का पथ प्रदर्शित करने वाला होगा। लालन-पालन का भार आपके चाचा ने सभाला किन्तु विधि का विधान ही विचित्र था—प्रारब्ध बलवान होता है—

जीवन मे मगल और कल्याण की कामना सभी करते है, पर क्या वास्तव मे सब मगल चाहते हैं ? मगल के उच्च आदर्श, साहस, कर्त्तव्य-निष्ठा और बलिदान की प्रतिस्पर्द्धा। यदि वास्तव मे आपके जीवन मे सचमुच कथित आदर्श उतर रहे है तो नि सदेह आपका जीवन मगल-मय होगा—बालक लादूराम का प्रारब्ध भी उसे मगलमय पथ की ओर ले जा रहा था।

संयोग बनाम भाग्य योग

सध्या का समय था—विशाल भुजदण्ड, उन्नत ललाट, भाल पर गोरोचन का तिलक लगाये एक सज्जन गाव की चौपाल पर भीड को सम्बोधन कर रहे थे—आकाश स्वच्छ, और निर्मल था। उपस्थित भीड मे काना फूसी हो रहा थी—कोई कह रहा था—"महाराज वडे पहुँचे हुये हैं" कोई प्रश्न करता "कौन है ?" भीड मे से एक ने कहा "आप भाद्राजून ठाकुर साहव के राजगुरु महन्त महाराज हैं"। धर्म के प्रचार हेतु आप स्थान-स्थान पर जाते है तथा आत्म-कल्याण का रास्ता दिखाते है।"

महन्त महाराज की दृष्टि वालक लादूराम जी पर भी पडी। वालक के अङ्ग सौष्ठव और सौन्दर्य को देख वे दग रह गये—बालक का विशाल भाल देख नेत्र-मुग्ध से हो गये तथा मन मे उसे साथ लेने की प्रवल उत्कण्ठा हुई—फिर क्या था ? महाराज ने लादूराम जी के चाचा को मिलने बुलाया और कहा" बालक बडा होनहार है—विलक्षण बुद्धि का है—इसे पढाओ लिखाओ।" वालक के चाचा ने कहा "महाराज ! आप जानते है गाव मे हमारे पास क्या साधन है ? बालक को पढावें लिखावे।" महाराज तपाक से वोले "अच्छा इसे ही हमारे पास छोड दो-हम इसके पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था कर देंगे।" अध्ययन का आकर्पण और प्रलोभन देखकर महन्त महाराज बालक को अपने साथ लिवालाये।

वालक महन्त महाराज के सान्निध्य मे जीवन-यापन करने लगा। महाराज के शिष्यो के व्यवहार तथा गुरु के रहन-सहन ने उन्हे उदासीन वना दिया।

यहा की व्यवस्था देख कर बालक के मन मे उल्टा प्रभाव डाला—उन्हे गुरु तथा उनके शिष्यो के जीवन से आकर्पण नही रहा—एक

रोज वे रात्रि को महन्त महाराज के यहा से चुपचाप चले आये तथा राणी स्टेशन पर आकर धर्मशाला मे ठहरे।

"जैसी हो भवितव्यता, तैसी मिले महाय" वाली कहावत उनके जीवन मे सोलह आने सही उतरती है। ब्यावर निवासी श्री नेमीचन्द्रजी खिवसरा भी राणी स्टेशन पर उस ही धर्मशाला मे ठहरे हुये थे—उनकी दृष्टि बालक पर पडी—देखा—"बालक कुछ खोया-खोया सा नजर आता है" पूछा "भाई! तुम कौन हो? कहा से आये हो और अब कहा जाने का इरादा है?" बालक ने सहज स्वभाव से उत्तर दिया "सेठ जी! मैं पटेल जाति का हू। रोजगार की तलाश मे यहा आया हू।" सेठ जी बालक की सरलता और सौम्यता पर मुग्ध हो गये और कहने लगे "क्या मेरे साथ ब्यावर चलोगे?" बालक सेठ जी की ओर टकटकी लगाकर देखने लगा—उसे क्या चाहिये था? वह नेमीचन्द्र जी के साथ ब्यावर जाने को तैयार हो गया—डूबते को तिनके का सहारा भी बहुत है, चाचा का घर छूटा, गुरु जी का वरदहस्त भी टूटा, किन्तु प्रारब्ध का आश्रय बलिष्ठ था। अत वह सेठ जी के साथ ब्यावर रहने लगा।

घर के काम-काज से छुट्टी पाकर बालक विद्याध्ययन मे जुट जाता था—सेठ जी भी बालक की उत्कण्ठा देख उसे पढने के लिये प्रेरणा देने लगे।

ब्यावर नगर राजस्थान के व्यापारिक केन्द्रो मे से एक रहा है सूती कपडे की मीलो का आकर्षण दूर-दूर के लोगो को जहा अपनी ओर आकर्षित करने मे सबल है वहा नगर की धार्मिक गतिविधिया भी मानव मात्र को अपनी ओर उन्मुख करने मे बलवती है। ब्यावर वैसे तो सब ही मत-मतान्तरो तथा धर्मो के अनुयायियो का केन्द्र हैं, किन्तु जैन धर्मावलम्बी आपको अधिक सख्या मे दृष्टिगत होगे। जैन सन्त और साध्वियो का यहा निरन्तर आगमन धार्मिक जगत मे तीव्रता लाने का कारण रहा है। श्री खीवसरा जी के ससर्ग से बालक लाधूराम जी भी जैन सन्तो तथा महासतियो के सम्पर्क मे आने लगे।

सयोगवश महासति श्री जसकवर जी श्री छोगा जी, अपने सती मडल के साथ ब्यावर मे विद्यमान थी–सेठ जी का समस्त परिवार उनके प्रवचनो का लाभ ले रहा था—लादूराम जी भी उनके साथ इस पुण्य प्रसग का लाभ लेने के लिये बडी उत्सुकता से सेवारत रहने लगे।

सयोग कहिये या प्रारब्ध—महासति श्री के आध्यात्मिक प्रवचनो का प्रभाव ऐसा पडा कि बालक को विरक्ति हो गई और एक दिन उसने सयम धारण की भावना सेठ जी के सामने प्रकट की—सेठ जी बालक की इस भावना को देख बडे प्रसन्न हुए। उनकी स्थिति और बालक की अभि-लाषा–दोनो मे द्वन्द छिड गया—बालक निरन्तर महासतिजी के प्रवचनो मे खोया-खोया सा रहने लगा—महासति जी ने बालक की यह दशा देख उसे आत्म-कल्याण के मार्ग का अनुगामी बनने मे योग देने लगे।

सकल्पो का प्रभाव ऐसा ही होता है। जैन सस्कृति के अनुसार मन की, और विचारो की शक्ति बडी प्रबल होती है। मन के तीव्र परिणाम कर्म बाधने तथा काटने के प्रबल आधार होते हैं। मन जहा तीव्रता से कर्म बाधता है उससे भी अधिक मन अन्तर्मुहूर्त्त मे असख्य और अनन्त कर्म बन्धनो को काटकर मुक्त भी हो सकता है। शुभ सकल्पो का अ कुर धीरे-धीरे कल्प वृक्ष बन जाता है। तब यह जीव सदा-सदा के लिये कर्म विमुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करता है—बालक के मन मे भी ऐसे ही शुभ सकल्पो का उन्नयन हो रहा था। बालक की उन्मुक्त प्रतिभा, चिंतन की उत्कट अभिलाषा, मधुर और निश्छल व्यवहार ने सहज ही महासति जी का स्नेह और आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये प्रेरित किया।

उन दिनो आचार्य प्रवर श्री १००८ श्री विनयचन्द्र जी म सा जयपुर मे विराज रहे थे। सेठ जी बालक को अपने साथ लेकर जयपुर आये तथा महाराज श्री की सेवा मे बालक को प्रस्तुत कर कहा „यह शिशु आपके श्री चरणो मे रहकर आत्म-कल्याण का इच्छुक हैं—कृपया इसे सेवा मे रहने की अनुमति प्रदान करने की कृपा कीजिये।" आचार्य श्री ने सेठ जी तथा बालक की भावना का समादर करते हुये रहने की अनुमति दे दी।

युवक की तरुणाई पर ससार की सभी शक्तिया आशान्वित होती हैं। शिक्षा, साहित्य, कला, उद्योग एव साधना सभी तो प्रेरणा और प्रगति के बल पाने को उत्सुक रहते हैं परन्तु युवक इन सब से मुख मोड़-कर स्वच्छन्द कीटाणुओ की प्रेरणा से विलासी सब्ज बागो के सुनहरे स्वप्नो मे दब कर पददलित हो जाता है। लेकिन उसे कर्त्तव्य कर्म की उच्चता पर चलना है—उसे सदाचारी, सद्-विचारक, सहिष्णु, सहयोगी तथा साधक बनकर उन्नति के पथ की ओर अग्रसर होना है। उसकी शिक्षा-दीक्षाआध्यात्मिक विचारो से ओत-प्रोत होनी चाहिये—हमारी सस्कृति का आधार आध्यात्मिकता है—भौतिकता नही। यही कारण है कि हमारा समग्र जीवन आदि से अन्त तक धार्मिक सस्कारो से अनुप्राणित है—श्रमण सस्कृति सन्तो की सस्कृति है—सन्त समाज का नैतिक चिकित्सक है—उसकी शिक्षा-दीक्षा का क्षेत्र सामान्यजन से विशद् और विस्तृस्त होता है। आचार्य श्री के सम्पर्क और ससर्ग मे आने के उपरान्त युवक लादूराम ने दशवैकालिक सूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र आदि का अध्ययन किया। आप अध्ययन के प्रति विशेप जागरूक थे। शनै-शनै लादूराम जी दीक्षा के ओर सस्कारित होने लगे।

मानव जीवन के दो भाग हे—एक मर्त्य और दूसरा अमर्त्य, मर्त्य भाग एक न एक दिन मृत होता ही है किन्तु जो अमृत भाग है, वह कभी नष्ट नही होता। दर्शन की भाषा मे मृत भाग मानव का भौतिक रूप है और अन्दर का अध्यात्मिक रूप अमृत भाग है। साधक अपने ज्ञान, दर्शन चरित्र की साधना से ही अन्दर के अमृत भाग के दर्शन करता है। ऐसे सन्तो को समाज, देश हमेशा याद करता है हमे उनके जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिये।

—उपाध्याय कवि श्री अमर मुनि

(अमर भारती से)

दीक्षा–चिन्तन और मनन

तप जीवन के सर्वांगीण विकास का सरल सोपान है। जीवन का प्रत्येक आचरण जब तप से पल्लवित और पुष्पित होता है। जीवन का प्रत्येक कर्म जब तप से आप्लावित होता है तब निश्चय ही हमारा जीवन साधक का जीवन बनता है—हमारा हर क्षेत्र तपोभूमि बन जावेगा। तप जीवन का सौख्य है। बालक लादूराम भी वैरागी जीवन विताते-विताते कुछ और ही निखर आये। उनकी अपूर्व स्मरण शक्ति को देखकर आचार्य श्री ने ढाई मास के पश्चात् ही वैसाख शुक्ला तृतीया की शुभ प्रभात बेला मे उसे मुनि धर्म की दीक्षा देने का निश्चय किया।

दीक्षा कार्य–क्रम राजस्थान की राजधानी, जयपुर नगर मे सम्पन्न करने की तैयारिया बडी तीव्रता से की जाने लगी। उक्त समारोह के लिये श्री सोभागमल जी ढढ्ढा का बाग तय किया गया। श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ तथा समस्त जैन समाज बडे उत्साह से एकजुट हो जुट पडा। दीक्षा का समस्त व्यय श्री मगनमल जी हजारीमल जी बोथरा की ओर से किया गया। राजस्थान के सुदूर भागो से दर्शनार्थी उमड पडे। दीक्षा कार्य सानन्द सम्पन्न हुआ। दीक्षा के उपरान्त आचार्य श्री ने आपको लाभचन्द्र नाम मे सस्कारित किया। युवा-मुनि लाभचन्द्र जी निरन्तर आचार्य श्री के चरणो मे रहकर अध्ययन के प्रति पूर्ण सजग और जागरूक रहते। अध्ययन और गुरु सेवा दोनो ही दिशाओ मे मुनि लाभचन्द्र सक्षम सिद्ध हुये।

त्याग और वैराग्य बाहर से लादने पर नहीं आते, वे तो अन्तर जागरण से ही आते हैं। जीवन मे त्याग और वैराग्य का उदय कब होगा- यह निश्चित नही है। किसी तिथि का निर्धारण भी नहीं किया जा सकता। मुनि श्री लाभचन्द्र जी का जीवन इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

मानव जब तक अपनी कामना को नही समझता, इन इच्छाओं, आकाक्षाओ और अभिलाषाओ की शृंखला को नही तोडता तब तक उसके अन्तरतल मे सच्ची शान्ति और सुख की लहरे नही उठ सकती। जीवन मे आनन्द और सुख की अनुभूति नही होती। चिन्तन और मनन उस अपार आनन्द की अनुभूति का उद्‌गम स्थान है। जब वह चिन्तन और मनन की गहराइयो मे गोते लगाना चालू करता है तब उसे सच्चे सुख के दर्शन होते है। मुनि श्री लाभचन्द जी भी दीक्षा के पश्चात् चिन्तन और मनन की ओर उन्मुख हुए।

निरन्तर जैन आगमो का पठन-पाठन करते हुए वे एक उच्चकोटि के वक्ता बन गये। वे हर व्यक्ति को उनकी त्रुटि उसके मुँह पर कहते नही हिचकते थे स्पष्टवादिता उनके जीवन की प्रमुखता थी। वाक शक्ति प्रभावोत्पादक थी। वे अपने निश्चय मे अटल रहते थे। अपने निश्चय और निर्णय के क्रियान्वन मे दृढ रहते थे। यह सब उनके चिन्तनशील व्यक्तित्व का परिचायक था। श्रोताओ पर साधक के अध्ययन, और चरित्र का ही प्रभाव पड सकता है। श्रोता उससे तर्क नही करते। वे तो केवल यह जानने का प्रयत्न करते थे कि उनके पास जाने वाला व्यक्ति कौन है ? यदि उनका कोई स्थान होगा तो श्रोता उनका आदर करेगे। यह कथन मुनि श्री लाभचन्दजी के जीवन मे पूरा उतरता था। वे जब भी और जहा भी बोलते थे-जाते थे लोग उनके विचारो से प्रभावित होते थे।

उपाध्याय कविश्री के शब्दो मे कहा जाय तो अतिशय युक्त न होगा-

"मात्र सत्य ही अखिल विश्व मे,
मानव जीवन का बल है।
बिना सत्य के सबल प्रबल या-
तुच्छ सर्वथा निर्बल है।

मुनिश्री लालचन्द जी का जीवन सत्य-विकसित और परिपूर्ण था।

बिहार और ातुर्मास

सन्त किसी जाति विशेष की सम्पत्ति नही, वरन् वह तो विश्व की महान् निधि हैं। वह स्थान-स्थान पर जाकर सत्य के निर्भीक अन्वेषक की भाति भव-भव पीड़ित मानव को अमरता का सन्देश देता है। वह जीव और जगत् की समस्याओ का समीचीन समाधान ढूँढता है। उसका समग्र जीवन इस तथ्य से अनुप्राणित होता है। उसके मसूबे और इरादे दृढ और अटल होते हैं। वह सकल्प का वज्र साथ लेकर चलता है—सत्-सकल्प उसकी सफलता के सोपान होते हैं—मुनि श्री भी अपने सकल्पो मे इस ही प्रकार दृढ और अटल रहते थे। वे धुन के पक्के और निश्चय के दृढ थे। दीक्षा लेने के बाद गुरु-सेवा मे रहकर भाषा-ज्ञान और सिद्धान्त का अभ्यास किया।

जैन सत कभी एक स्थान पर नही रहते। वह बहता हुआ स्रोत हैं जो अमृत-तुल्य जल देता है। वह जल शुद्ध और स्वास्थ्यप्रद होता है। ठीक उसी प्रकार सन्त का स्वभाव विचरणशील अर्थात् निरन्तर बिहार करने वाला होता है। वह बन्द तालाब के पानी के समान सीमाओ मे बँधकर नही रहता। मुनि श्री ने भी इस ही उद्देश्य से राजस्थान मे ही नही, अपितु मालवा, खानदेश, बराड, पूना, बम्बई, गुजरात, काठियावाड, पजाब आदि अनेक प्रान्तो मे सवत् २०२६ तक जिनवाणी का प्रचार तथा प्रसार किया। जब तक शरीर मे शक्ति और सामर्थ्य रही आप विहार करते रहे।

आपने अपने साधु जीवन-काल मे करीब ४७ चातुर्मास देश के कई भागो मे किये हैं। आपके चातुर्मास मे वहा की स्थालीय जनता काफी तादाद मे आपके प्रवचनो का लाभ उठाती थी। आपने अपने जीवन काल मे जिनवाणी का प्रचार किया। आपकी प्रवचन-शैली को वहा की जनता आज भी याद करती है।

आपके चातुर्मास का विवरण

क्रम	सवत	स्थान	क्रम	सवत	स्थान
१	१९७३	जोधपुर	२६	१९९८	चूडा सो
२	१९७४	भोपालगढ	२७	१९९९	राणापुर
३	१९७५	जयपुर	२८	२०००	उपलेव सौ
४	१९७६	जयपुर	२९	२००१	सिद्धपुर (गु)
५	१९७७	पीपाड	३०	२००२	सूरत सग्रामपुर
६	१९७८	अजमेर	३१	२००३	खानदेश (खे)
७	१९७९	जोधपुर	३२	२००४	धुलिया
८	१९८०	,,	३३	२००५	गोविन्दगढ
९	१९८१	,,	३४	२००६	भोपालगढ
१०	१९८२	,,	३५	२००७	पुष्कर
११	१९८३	जोधपुर	३६	२००८	अजमेर
१२	१९८४	पाली	३७	२००९	मदनगज किशन
१३	१९८५	किशनगढ	३८	२०१०	सादडी
१४	१९८६	अजमेर	३९	२०११	सेजत
१५	१९८७	जयपुर	४०	२०१२	डेहणु
१६	१९८८	मदसौर M P,	४१	२०१३	माटूगा (वम्वई)
१७	१९८९	खाचरोद	४२	२०१४	दादरा ,,
१८	१९९०	भोपालगढ	४३	२०१५	सादडी ,,
१९	१९९१	गगराणा	४४	२०१६	अजमेर
२०	१९९२	स माधोपुर	४५	२०१७	भोपालगढ
२१	१९९३	कसूर पजाव	४६	२०१८	किशनगढ
२२	१९९४	भिणाय	४७	२०१९	से जोधपुर मे
२३	१९९५	गोविन्द गढ			स्थिरवास मे रहे।
२४	१९९६	सिद्धपुर गु,			
२५	१९९७	वीरमगाव गु			

ॐ

महा-प्रयाण

प्राय यह देखने मे आया है कि कुछ आत्माओ को उनके गुलाबी-बचपन मे वैराग्य उत्पन्न हो जाता है, कुछ आत्माओ मे उनके जीवन के बसन्त-काल मे वैराग्य उत्पन्न होता है और कुछ आत्माओ को जीवन की सध्या बेला मे वैराग्य के दर्शन होते है। मुनि श्री लाभचन्द्र जी महाराज सा के मनमे अपने गुलाबी बचपन से ही वैराग्य की भावना जाग्रत हो गई थी, जो समय पाकर जीवन के बसन्त मे प्रस्फुरित हो, चलते–चलते जीवन की सध्या मे अलौकित आनन्द की अनुभूति देने वाली कारगर सिद्ध हुई। सवत् २०१८ का समय था। आचार्य श्री १००८ श्रीहस्तीमल जी महाराज सा बिहार करते हुए किशनगढ पधारे किशनगढ के श्रावको ने श्री लाभचन्द्रजी म सा को चातुर्मास के लिए आचार्य श्री से प्रार्थना की आचार्य श्री ने प्रार्थना मजूर कर, विहार करते हुए जयपुर पधारे, जयपुर मे उस समय श्री लाभचन्द्रजी म सा का स्वास्थ्य ठीक नही था, जयपुर श्री सघ ने स्वास्थ्य को ध्यान मे रखते हुए श्री लाभचन्द्रजी म सा से स्थिरवास की प्रार्थना की, पर उन्होने स्वीकार नही की तथा चातुर्मास के लिए आप उसी समय किशनगढ पधार गये। किशनगढ से चातुर्मास समाप्तकर, अजमेर, पुष्कर, पीसागण होते हुये पुन महाराज श्री अजमेर पधारे। इस समय आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज सा के सान्निध्य मे श्रीमती अचरज कु वर धर्मपत्नी श्री मोहनलाल जी नौलखा दीक्षा ले रही थी। पोष सुदी १२ सवत् २०१८ को दीक्षा समारोह उत्साह के वातावरण मे सम्पन्न हुआ। अजमेर से बिहार कर-मुनि-श्री पुरष्कर, थावला भोपालगढ तथा पीपाड पधारे। पीपाड से मुनि श्री महामदिर होकर सरदारपुरा सवत् २०१९ वैसाख कृष्णा प्रतिपदा शुक्रवार को प्रवेश किया। सवत् २०१९ से सवत् २०२६ तक महाराज श्री स्थिर वासते हेतु यही विराजे।

प० मुनि श्रीलक्ष्मीचन्द्रजी, श्रीजयत मुनि और मुनि श्रीचन्द्रजी भी यही विराजे थे। पुण्यवान् को सहजही वैसा योग मिल जाता है। शरीर पूर्ण

शिथिल हो चुका था। आश्विन कृष्णा षष्ठी बुधवार संवत् २०२६ को रात्रि के सवादस बजे तपोनिष्ठ संत की इहलीला समाप्त हो गई।

स्थिरवास मे बीमारी की हालत मे श्री जयन्त, मुनि श्री श्रीचन्द्रजी की सेवायें चिर-स्मरणीय रहेगी।

पंडितरत्न श्री चौथमलजी म० सा० ने जीवन भर पूज्य श्री श्री लाभचन्द्रजी की सेवा की।

ज्ञानी पुरुष काम और अर्थ के सम्बन्ध मे होनहार को प्रधानता देकर धर्म विरुद्ध आचरण नही करते, किन्तु समभाव रखने का महान् पुरुषार्थ करते हैं और हर्ष, विषाद, राग-द्वेष, हिंसा आदि पापो से बचते हैं। वे दूसरो की आत्मा का कल्याण करते हैं।

—अमर भारती के सौजन्य से

त्याग और संयम ही जीवन की सार्थकता

लेखक—मुनि श्रीचन्द जी म सा

जीवन की सार्थकता या जीवन का मोड त्याग के द्वारा होता है भोग से नही। आज तक जिन-जिन महापुरुपो ने ससार को असार समझ-कर अपनी आत्मा को त्याग की ओर उन्मुख किया, वैराग्य मे रमाया वे महापुरुष सिद्धि को प्राप्त हुए और उन्ही का जीवन सफल हुआ।

आज ससार अनेक भयानक व्याधियो से घिरा हुआ है। मनुष्य अनेकानेक दु खो से पीडित है। दु खो से छटकारा पाने का मार्ग ज्ञानी त्यागमय जीवन बताते हैं। ज्ञानी और अज्ञानी मे मात्र इतना फर्क है कि जहा अज्ञानी भोग विलासिता की लालसा मे एश्वर्य के पीछे आखे मू दकर दौडता है वहा ज्ञानी इन सब सुख एव विलासिता के साधनो को लात मार-कर निकल जाता है। वस्तुत ससार मे दिखने वाली भव्यता विलासिता सुख की पूर्णता नही न्यूनता है। ससार का सुख अज्ञानियो की दृष्टि मे सुख है। ज्ञानियो की दृष्टि मे वही महा-भयानक दु खो का घर है। वस्तुत त्याग ही परमशाति पथ की ओर अग्रसर करने वाला है। वह मनुष्य को आत्म-केन्द्रित करने के साथ-साथ मनुष्य दृष्टि की सार्थकता को नजदीक से देख सकने मे समर्थ करता है।

अनन्तकाल से यह जीव ससार मे परिभ्रमण करता आ रहा है। जिन आत्माओ ने गुरु कृपा से आत्मबोध पाकर अपनी आत्म-ज्योति को जगाया है वे सासारिक माया-जाल से मुक्त होकर मोक्ष मार्ग की ओर अग्रसर होने हैं। जीवन का लक्ष्य जीवन विकास करना है। यह विकास त्याग-वैराग्य से ही सम्भव है। ज्ञान-दर्शन से आत्मा का विकास होता है अत जीवन की सार्थकता के लिए मनुष्य को त्याग मार्ग अपनाना अनि-वार्य है।

उपयुक्त कथन की पुष्टि के लिए यहा दो महान् पुरुपो के उदाहरण दिये जाते हैं —

स्वर्गीय श्री अमरचन्द जी महाराज साहब उत्कृष्ट क्रिया के धनी थे। हर परिस्थिति मे वे अपने व्रत का पूर्णरूप से पालन करते थे। एक वार वे सख्त बीमार पड गए, जिससे उनके शरीर मे असहनीय वेदना होने पर भी आप शात भाव के साथ दैनिक क्रिया-कलाप सपादित करते रहे। इस भयकर वेदना की स्थिति मे भी उन्होने साधु मर्यादा मे रहकर कठोर सयम का पालन किया। इस तरह उन्होने एक साधक के नाते ससार के सामने मर्यादा-पालन करने का आदर्श रखा।

आपके चेहरे पर एक क्राति चमक रही थी। आपका जीवन वडा सादा, और सरल था। आप श्रावक-श्राविकाओ से व्यर्थ की वात नही करते थे। सदा उनको चरित्र-निर्माण का मार्ग समझाते थे। आपके चेहरे पर विपम स्थिति मे भी प्रसन्नता नजर आती थी। आपके हृदय मे कोमलता सरसता, मृदुता का वास था। अन्तिम समय मे भी जयपुर मे केंसर रूपी भयकर रोग के कारण भी आप अपनी साधना मे तल्लीन रहते थे। आपका नाम जयपुर के जैन इतिहास मे सदा जुडा रहेगा।

दूसरा उदाहरण स्वर्गीय श्री लाभचन्द जी महाराज साहब का है। आपके विचारो मे सरलता, निष्कपटता, साधक के वे सब गुण मौजूद थे। उनके वचन मे दृढता थी। समाज मे आप स्पष्ट वक्ता थे, उन्होने कई जगह चातुर्मास करके जिनवाणी का शखनाद किया। जब आप सथारा (अन्तिम प्रत्याख्यान) करके स्वर्ग गमन की तैयारी कर रहे थे उस समय आपकी चेतन अवस्था इतनी थीकि कुछ भाई आपकेपास बैठकर श्रीविनय-चन्द चौबीसी के भजनो का उच्चारण कर रहे थे। असावधानी से कुछ पद छूट गए तो उन्होंने अपनी चेतनावस्था मे लोगो को रोका, आपने रोककर अमुक पद छूट जाने का सकेत किया। उपर्युक्त उदाहरण व भाव से यह स्पष्ट होता है कि आप इस अवस्था मे भी कितने जागरूक थे। आपका लक्ष्य सच्चा सुख त्याग और कठोर सयम मे था।

मुझे भी आपकी सेवा का लाभ मिला था। आप अपनी वीमारी मे

दूसरे साधक से कम से कम सेवा कराते थे। वे कितने धीर-गम्भीर थे उनका चेहरा सदा प्रसन्न रहता था। अन्त समय मे आपने सथारा करके नश्वर शरीर को छोडा और अपनी आत्मा को अमर-ज्योति मे विलीन कर लिया। मै इन दोनो महापुरुषो के लिए क्या लिखू जो भी लिखा है वह सूरज के सामने दीपक दिखाने के समान है। मै अपनी श्रद्धा के साथ उन दोनो महापुरुषो का कोटि-कोटि अभिनन्दन करता हू।

संयोग–सुयोग

(ले० श्री सागरमल डागा)

अध्यक्ष, श्री अमर जैन मैडिकल रिलीफ सोसाइटी

आज से लगभन १२ वर्ष पूर्व की घटना है। ऐसा लगता है मानो कल की सी वात हो। सन् १९६० का वर्ष था। आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी महाराज सा अपने अन्य मुनिगणो के साथ जयपुर मे विराज रहे थे—चातुर्मास आनन्दपूर्वक समाप्त हो चुका था, धर्म की प्रभावना जन-मानस मे व्याप्त थी। सम्यक् दर्शन, सम्यक् चरित्र और सम्यक् ज्ञान की चर्चा बहुत हो चुकी थी—प्रश्न तो मूल मे यह था कि प्रदत्त ज्ञान को जीवन मे ढाले कसे ? विचार करते २ सवत्सरी भी चली गई और दूसरा चातुर्मास सन्निकट आगया। जेष्ठ का महिना भी वीतने जारहा था। आचार्य श्री के गुरुभाई आत्मार्थी मुनि श्री अमरचन्द्रजी महाराज का स्वास्थ्य बहुत गिर चुका था—वे केंसर के रोग से पीडित थे—जब भी कभी उनसे साक्षात्कार होता पूछता "महाराज ! तबियत कैसी है" सब आनन्द है। आखिर वे घडिया भी आई जब मुनि श्री जीवन और मृत्यु से सघर्ष करने लगे और आखिर होनी को यही स्वीकृत था, उनका भौतिक शरीर इहलीला समाप्त कर गया।

सध्या का समय था—स्व० श्री स्वरूपचन्द्र जी चौरडिया, श्री श्रीचन्द्रजी गोलेछा, मै और समाज के कतिपय वन्धु वैठे एक स्थान पर विचार कर रहे थे—मुनि श्री की स्मृति मे कोई ऐसा सस्थान निर्मित किया जाय जो मुनि श्री के जीवनादर्श के अनुरूप हो—सहसा मेरे मन मे आया—जयपुर मे राजकीय चिकित्सा सुविधा पर्याप्त नही है—अत हमे राजस्थान की राजधानी के निवासियो को चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराने के लिये कोई ठोस कदम उठाना चाहिये। स्व० श्री चौरडिया ने कहा "डागा जी मेरी भी इच्छा है कि जयपुर मे एक आदर्श प्रसूति-गृह स्थापित किया जाय।" इस प्रकार विचार करते-करते मै और मेरे

साथियो ने एक निश्चय किया कि मुनि श्री की स्मृति को मूर्तरूप देने के लिये हमे श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी की स्थापना करनी चाहिये—उक्त सोसाइटी के अन्तर्गत चिकित्सालय, निदान केन्द्र प्रसूति-गृह आदि प्रवृत्तिया चालू करनी चाहिये। सब ही उपस्थित बन्धु बडी प्रसन्नता और उत्साह से उक्त निर्णय के क्रियान्वयन के लिये एकमत हो जुट गये।

मै आज तक यह समझ नही पाया कि यह एक सयोग था या सुयोग—मुनि श्री की अदृश्य प्रेरणा ने हमारी मनोकामना को इस वृहत रूप मे पूरा किया—मै तो इसे सयोग और सुयोग दोनो ही मानता हू।

आज जब श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी के क्रिया-कलापो पर दृष्टि डालते हैं तो सहसा हमे विश्वास नही होता कि उस बीज कण मे क्या इतना वट वृक्ष होने की क्षमता थी ? यह तो मुनि श्री की प्रेरणा का मधुर प्रसाद है। अन्यथा हमारी क्या क्षमता कि लाखो रोगियो की चिकित्सा क्षमता वाली इतनी विशाल प्रवृत्ति का शुभारम्भ कर सकें।

सोसाइटी का प्रमुख और प्रधान लक्ष्य बिना किसी जाति, समाज, लिंग भेद के मानव मात्र की सेवा करना है—ऐसे पुनीत उद्देश्य की पूर्ति का एकमात्र साधन मुनि श्री का सान्निध्य और साध्य है। आज इस सोसाइटी के अन्तर्गत श्री अमर जैन चिकित्सालय, अमर-भवन, परीक्षण प्रयोगशाला, एक्सरे केन्द्र श्री स्वरूपचन्द्र जी चौरडिया प्रसूति-गृह गतिशील है। सोसाइटी ने अपनी योजनाओ को क्रियान्वित करने के लिये निजी भवन का निर्माण भी कर लिया, जहा प्रसूति-गृह तथा चिकित्सालय चल रहे हैं। सस्था के सदस्यो का उत्साह, लगन, निष्ठा और सेवा-भावना इस प्रवृत्ति की चेतना है उस चेतना का उद्गम स्थान मुनि श्री की अदृश्य प्रेरणा है। ऐसे महा-मानव के प्रति हमारा शत्-शत् बार प्रणाम।

संयोग-सुयोग

(ले० श्री सागरमल डागा)
अध्यक्ष, श्री अमर जैन मैडिकल रिलीफ सोसाइटी

आज से लगभन १२ वर्ष पूर्व की घटना है। ऐसा लगता है मानो कल की सी बात हो। सन् १९६० का वर्ष था। आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी महाराज सा अपने अन्य मुनिगणो के साथ जयपुर मे विराज रहे थे—चातुर्मास आनन्दपूर्वक समाप्त हो चुका था, धर्म की प्रभावना जन-मानस मे व्याप्त थी। सम्यक् दर्शन, सम्यक् चरित्र और सम्यक् ज्ञान की चर्चा बहुत हो चुकी थी—प्रश्न तो मूल मे यह था कि प्रदत्त ज्ञान को जीवन मे ढाले कसे ? विचार करते २ सवत्सरी भी चली गई और दूसरा चातुर्मास सन्निकट आगया। जेष्ठ का महिना भी बीतने जारहा था। आचार्य श्री के गुरुभाई आत्मार्थी मुनि श्री अमरचन्द्रजी महाराज का स्वास्थ्य बहुत गिर चुका था—वे केसर के रोग से पीडित थे—जब भी कभी उनसे साक्षात्कार होता पूछता "महाराज ! तबियत कैसी है" सब आनन्द है। आखिर वे घडिया भी आई जब मुनि श्री जीवन और मृत्यु से सघर्ष करने लगे और आखिर होनी को यही स्वीकृत था, उनका भौतिक शरीर इहलीला समाप्त कर गया।

सध्या का समय था—स्व० श्री स्वरूपचन्द्र जी चौरडिया, श्री श्रीचन्द्रजी गोलेछा, मैं और समाज के कतिपय बन्धु बैठे एक स्थान पर विचार कर रहे थे—मुनि श्री की स्मृति मे कोई ऐसा सस्थान निर्मित किया जाय जो मुनि श्री के जीवनादर्श के अनुरूप हो—सहसा मेरे मन मे आया—जयपुर मे राजकीय चिकित्सा सुविधा पर्याप्त नही है—अत हमे राजस्थान की राजधानी के निवासियो को चिकित्सा सुविधाये उपलब्ध कराने के लिये कोई ठोस कदम उठाना चाहिये। स्व० श्री चौरडिया ने कहा "डागा जी मेरी भी इच्छा है कि जयपुर मे एक आदर्श प्रसूति-गृह स्थापित किया जाय।" इस प्रकार विचार करते-करते मैं और मेरे

साथियो ने एक निश्चय किया कि मुनि श्री की स्मृति को मूर्तरूप देने के लिये हमे श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी की स्थापना करनी चाहिये—उक्त सोसाइटी के अन्तर्गत चिकित्सालय, निदान केन्द्र प्रसूति-गृह आदि प्रवृत्तिया चालू करनी चाहिये। सब ही उपस्थित बन्धु बडी प्रसन्नता और उत्साह से उक्त निर्णय के क्रियान्वयन के लिये एकमत हो जुट गये।

मैं आज तक यह समझ नही पाया कि यह एक सयोग था या सुयोग—मुनि श्री की अदृश्य प्रेरणा ने हमारी मनोकामना को इस वृहत रूप मे पूरा किया—मैं तो इसे सयोग और सुयोग दोनो ही मानता हू।

आज जब श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी के क्रिया-कलापो पर दृष्टि डालते हैं तो सहसा हमे विश्वास नही होता कि उस बीज कण मे क्या इतना बट वृक्ष होने की क्षमता थी? यह तो मुनि श्री की प्रेरणा का मधुर प्रसाद है। अन्यथा हमारी क्या क्षमता कि लाखो रोगियो की चिकित्सा क्षमता वाली इतनी विशाल प्रवृत्ति का शुभारम्भ कर सकें।

सोसाइटी का प्रमुख और प्रधान लक्ष्य विना किसी जाति, समाज, लिंग भेद के मानव मात्र की सेवा करना है—ऐसे पुनीत उद्देश्य की पूर्ति का एकमात्र साधन मुनि श्री का सान्निध्य और साध्य है। आज इस सोसाइटी के अन्तर्गत श्री अमर जैन चिकित्सालय, अमर-भवन, परीक्षण प्रयोगशाला, एक्सरे केन्द्र श्री स्वरूपचन्द्र जी चोरडिया प्रसूति-गृह गतिशील है। सोसाइटी ने अपनी योजनाओ को क्रियान्वित करने के लिये निजी भवन का निर्माण भी कर लिया, जहा प्रसूति-गृह तथा चिकित्सालय चल रहे हैं। सस्था के सदस्यो का उत्साह, लगन, निष्ठा और सेवा-भावना इस प्रवृत्ति की चेतना है उस चेतना का उद्गम स्थान मुनि श्री की अदृश्य प्रेरणा है। ऐसे महा-मानव के प्रति हमारा शत्-शत् बार प्रणाम!

सब तरह आनन्द ही आनन्द है

ले० सरदारमल चोपडा

बात लगभग तेरह वर्ष पुरानी है—दिनो को जाते देर नही लगती। कल की सी बात है। सन्ध्या का समय था। मै लाल-भवन मे बैठा था। मुनि श्री अमरचन्द जी म सा- असाध्य रोग से पीडित थे। कैंसर का नाम सुनते ही रोगटें खड हो जाते हैं। ऐसी पीडा जिसका आज तक कोई उपचार नही। मेरे मन मे एक बडी प्रब्ल इच्छा हो रही थी-"मै अपने निजी चिकित्सक डा गुलाबचन्द पुरोहित को मुनि श्री को दिखाना चाहता था। मै सकोचवश फिर भी एक रोज साहस बटोर कर मैने बडी धीमी आवाज मे अपनी मनोव्यथा महाराज श्री के सामने प्रकट की" महाराज सा आज्ञा हो तो मै डाक्टर पुरोहित को ले आऊँ। मुनि श्री ने कहा चोपडा जी ! ससारचक्र है, सुख-दु ख पीडा, यातना तो बडे-बडे तीर्थङ्करो को भी भोगनी पडती है। सहन करना ही इसका सच्चा समाधान है और वही आनन्द है—आप क्यो ।

मुझ से नही रहा गया। मुनि श्री मुनि श्री ही थे—मुझ जैसे तुच्छ को जो कुछ कह सकते थे कहा और मौन साध बैठे। मैने हिम्मत कर डा पुरोहित से अपने मनोभाव प्रकट किये। डाक्टर साहब ने कहा "चोपडा जी ! महाराज श्री औषध तो ग्रहण करते नही हैं फिर चिकित्सक सेवा कैसे करें ? फिर भी आप जब कह रहे हैं तो मुझे कोई आपत्ति नही। एक पन्थ दो काज—मै भी मुनि श्री के दर्शनो का लाभ लू गा—चलिये।"

वैशाखी का दिन था। लगभग ५ बजे थे। मेरे अनुरोध और आग्रह तथा डाक्टर साहब के मनोभाव साकार हो उठे। डाक्टर साहब लालभवन पहुँचे—महाराज श्री पाट पर विराजे हुये थे। डाक्टर साहब ने विधिवत् वन्दना कर मुनि श्री को अपने मनोभाव प्रकट किये और कहा

"महाराज सा ! कैसी तबियत है ? नि श्री ने कहा-' सब तरह आनन्द ही आनन्द है।"

डा पुरोहित महाराज साहब के उक्त शब्द सुनते ही दग रह गए और कहने लगे "चोपडाजी ! कैसर का रोगी - जो पानी के लिए त्राहि-त्राहि करता रहता है—असहनीय पीडा से कराहता रहता है—मुनि श्री के भाल पर लेश मात्र भी व्यथा के चिन्ह नही है—वास्तव मे मुनि श्री उच्च-कोटि के तत्वज्ञानी सन्त है—उनकी सहनशीलता, आत्मशक्ति सचमुच श्लाघनीय है।"

आज भी जब मैं और डाक्टर पुरोहित एकान्त मे बैठते हैं तो वह दृश्य आखो के सामने आ जाता है। सच है सन्त किसी विशेष जाति और समाज की निधि नही होता। वह तो सम्पूर्ण विश्व का प्रतिनिधि होता है आत्म-कल्याण के पथ पर चलता हुआ भव-भव पीडित मानव को शान्ति का सन्देश देता है। आज भी महाराज श्री के वे शब्द "सब तरह आनन्द ही आनन्द है" मेरे कानो मे गु जन करते है और प्रेरणा देते हैं "हे मानव ! दु खो से कतराकर भाग मत। साहस के साथ सहन करने की प्रवृत्ति डाल भगना कायरता है।"

आपके सामने उनके गुणो की एक झलक मात्र ही रखी है। वे अनेक गुण सम्पन्न थे।

इन महापुरुषो ने अपने जीवन-काल मे मानव को त्याग, वैराग्य, साधना और सहनशीलता का सच्चा मार्ग दिखाया।

ऐसे महापुरुषो को मेरा कोटि-कोटि अभिनन्दन।

—सरदारमल चोपडा

स्वामी श्री मर न्द्र जी महारा

शास्त्रवाणी का सार है कि ससार के समस्त प्राणियो को आत्मवत् समझने वाला ही सच्चा साधु तथा परायी-पीडा से सिहर उठने वाला ही स्वामी या महात्मा है। वर्षो स्वामी जी की सन्निधि मे रहने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ, पर मैंने कभी भी उनको किसी के प्रति क्रोध करते नही देखा। क्रोध की परिस्थिति मे भी उनके मुख-मण्डल पर मुस्कान बनी रहती थी।

रत्न वश के दिवगत सतो मे स्वामी जी कि याद जन-मन मे चिरकाल तक बनी रहेगी। वे शास्त्र-सागर मे देर तक गहरा गोता लगाने वाले सत तो नही थे, मगर आगमीय-सिद्धान्तो के अनुकूल आचरण करने मे जीवन भर अप्रमादी सिद्ध हुए। आपकी मनोहारिणी दृष्टि के सामने तर्क-प्रवीण व्यक्ति भी हार मान लेता था। आपके सम्मोहन का जादू मूर्ख और पण्डित निर्धन एव धनी, सबल तथा निर्बल सब पर समान प्रभाव डालता था। स्वामी जी की वाणी को वस्तुत अमर-वाणी मानकर भक्त उसका पालन करने मे अपना अहोभाग्य समझते थे।

आपकी सहृदयता, सदाशयता, सुशीलता, गभीरता, परोपकारिता, सेवा परायणता, आत्मीयता, भावुकता, क्षमाशीलता, निश्छलता, दया-द्रवणता, सुजनता, और गुण ग्राहकता आदि अनेक गुणो को देखकर सहज मे हो आपको गुण-निधान, आत्म-निरत सत समझा जा सकता था।

जन-रव से दूर एकान्त-शान्त स्थान मे आत्म-चिन्तन मे लीन होकर आप परमहँस के रूप मे स्व पर का भेद भूलकर एक अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करने मे जीवन की सार्थकता समझते थे। जिस तरह आत्म-वीणा के तारो की झकृति जन्य अनहद नाद का आनन्द आपको प्रमुदित करता, वैसे ही जन-सकुल-वीथियो और नगर के ऊँचे-ऊँचे भवनो

मे भिक्षार्थ जाते हुए आपके जराजर्जर शरीर को थोडा सा भी कष्टानुभव नही होता था। योगियो के लिए अगम्य समझा जाने वाला सेवा-धर्म आपके लिए सर्वथा सन्तोषप्रद बना रहा। परिचर्या या साधन दोनो ही क्षेत्रो मे आप सदा प्रगतिशील सिद्ध हुए।

सम्प्रदाय के हर छोटे-बडे सन्तो के दिल मे आपके लिए यथेष्ट आदर व सम्मान बना रहा। सम्प्रदाय के आचार्य श्री हस्तीमल जी म० आपका बहुत सम्मान करते तथा आचार्य श्री के प्रति आपका एकान्त प्रेम सदा सराहनीय बना रहा। जीवन की अन्तिम घडी तक आप आचार्य श्री से दूर रहने को कतई तैयार नही हुए।

जयपुर के श्रावको ने जहा कि आपने अपना यह भौतिक नश्वर शरीर छोडा, आपकी स्मृति मे "अमर औषधालय" का निर्माण कर, समाज सेवा के सग आपके अमर नाम के अनुरूप अमर कीर्ति स्तम्भ को स्थापित कर दिया जो कि युगो तक पर-पीर-निवारक रूप मे आपकी अमरता का परिचायक बना रहेगा।

गुणानुरक्त
—शशिकान्त झा "शास्त्री"

स्वामी श्री मरचन्द्र जी महारा

शास्त्रवाणी का सार है कि ससार के समस्त प्राणियो को आत्मवत् समझने वाला ही सच्चा साधु तथा परायी-पीडा से सिहर उठने वाला ही स्वामी या महात्मा है। वर्षो स्वामी जी की सन्निधि मे रहने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ, पर मैंने कभी भी उनको किसी के प्रति क्रोध करते नही देखा। क्रोध की परिस्थिति मे भी उनके मुख-मण्डल पर मुस्कान बनी रहती थी।

रत्न वश के दिवगत सतो मे स्वामी जी कि याद जन-मन मे चिरकाल तक बनी रहेगी। वे शास्त्र-सागर मे देर तक गहरा गोता लगाने वाले सत तो नही थे, मगर आगमोय-सिद्धान्तो के अनुकूल आचरण करने मे जीवन भर अप्रमादी सिद्ध हुए। आपकी मनोहारिणी दृष्टि के सामने तर्क-प्रवीण व्यक्ति भी हार मान लेता था। आपके सम्मोहन का जादू मूर्ख और पण्डित निर्धन एव धनी, सबल तथा निर्बल सब पर समान प्रभाव डालता था। स्वामी जी की वाणी को वस्तुत अमर-वाणी मानकर भक्त उसका पालन करने मे अपना अहोभाग्य समझते थे।

आपकी सहृदयता, सदाशयता, सुशीलता, गभीरता, परोपकारिता, सेवा परायणता, आत्मीयता, भावुकता, क्षमाशीलता, निश्छलता, दया-द्रवणता, सुजनता, और गुण ग्राहकता आदि अनेक गुणो को देखकर सहज मे हो आपको गुण-निधान, आत्म-निरत सत समझा जा सकता था।

जन-रव से दूर एकान्त-शान्त स्थान मे आत्म-चिन्तन मे लीन होकर आप परमहँस के रूप मे स्व पर का भेद भूलकर एक अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करने मे जीवन की सार्थकता समझते थे। जिस तरह आत्म-वीणा के तारो की झकृति जन्य अनहद नाद का आनन्द आपको प्रमुदित करता, वैसे ही जन-सकुल-वीथियो और नगर के ऊँचे-ऊँचे भवनो

भिक्षार्थ जाते हुए आपके जराजर्जर शरीर को थोडा सा भी कष्टानुभव ही होता था। योगियो के लिए अगम्य समझा जाने वाला सेवा-धर्म आपके लिए सर्वथा सन्तोषप्रद बना रहा। परिचर्या या साधन दोनो ही क्षेत्रो मे आप सदा प्रगतिशील सिद्ध हुए।

सम्प्रदाय के हर छोटे-बडे सन्तो के दिल मे आपके लिए यथेष्ट आदर व सम्मान बना रहा। सम्प्रदाय के आचार्य श्री हस्तीमल जी म० आपका बहुत सम्मान करते तथा आचार्य श्री के प्रति आपका एकान्त प्रेम सदा सराहनीय बना रहा। जीवन की अन्तिम घडी तक आप आचार्य श्री से दूर रहने को कतई तैयार नही हुए।

जयपुर के श्रावको ने जहा कि आपने अपना यह भौतिक नश्वर शरीर छोडा, आपकी स्मृति मे "अमर औषधालय" का निर्माण कर, समाज सेवा के सग आपके अमर नाम के अनुरूप अमर कीर्ति स्तम्भ को स्थापित कर दिया जो कि युगो तक पर-पीर-निवारक रूप मे आपकी अमरता का परिचायक बना रहेगा।

गुणानुरक्त
—शशिकान्त झा "शास्त्री"

श्रद्धा के दो शब्द

जिन्दगी ऐसी बना,
जिन्दा रहे दिलशाद तू।
जब न हो दुनिया मे तू,
दुनिया को आये याद तू ।।

हमारे विगत इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ अनेकानेक महान् साधको के त्याग, तप-पूरित सुरभित जीवन से ससार को मार्ग दर्शन मिलता है।

ऐसे ही हैं

परम पूज्य

स्व. श्री अमरचन्द जी महाराज साहब

एव

स्व. श्री लाभचन्द जी महाराज साहब

का

जीवन

अगरबत्ती के समान समाज मे खुसबू फैलाकर ससार मे अपना नाम अमर कर गये, ऐसे महापुरुषो को ससार सदैव वन्दन करता रहेगा। मेरा भी उनके चरण कमलो मे

असीम श्रद्धा से बस मै तो,
सादर शीश झुकाती हूँ।
श्रद्धा के दो-चार शब्द,
चरणो मे भेट चढाती हूँ ।।

—साध्वी मैना सुन्दरी जी

(व्याख्यान से)